गये और निरबंध होकर अपने निजदेश में, अपने सच्चे माता पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंच कर, अमर आनंद को प्राप्त हुआ और वही संत सतगुरु और उनके सतसंग की महिमा जानेगा ॥

१६—इस्से ज़ाहर है कि जो कोई देह और दुनिया से प्रीत करेगा, यानी जगत के बंधनों में गिरिफ़्तार रहेगा, वह चौरासी में भरमेगा, यानी बारम्बार देह धारन करके, दुख सुख और जनम मरन का कलेश सहता रहेगा । लेकिन जो कोई संत सतगुरु और कुल्ल मालिक के चरनों में प्रीत करेगा, वह एक दिन निरबंध होकर निज धाम में बासा पावेगा, और परम आनंद को प्राप्त होगा ॥

बचन—३३

सच्चे परमार्थी के भक्ती की कारवाई का बर्णन

१—पहिले संत सतगुरु की ख़ास ज़रूरत ।

१—आदि में जब कुछ रचना न थी, तब अनामी पुर्ष राधास्वामी के चरनों से, आदि धार शब्द की प्रघट हुई, और उसीने चांदना किया, और गुबार को हटाती हुई और हर एक मंडल की जुदा २ रचना करती हुई, नीचे उतरी और पिंड में ठहरी, और मन और

इन्द्रियों के वसीले से बाहर माया की रचना में फंस गई, और अनेक जनम धारन करके अपने निज घर और कुल्ल मालिक को (जो उसके सच्चे माता पिता हैं) भूल गई, और कुटम्ब परवार और भोगों में बँध कर दुख सुख सहती है ॥

२—अब वास्ते दूर करने इस भूल और भरम और दुखः सुख के चक्कर के ज़रूर है कि कोई राधास्वामी देश का भेदी और बासी मिले, तो वह अपने बचनों की धार से घट का तमोगुन और अंधकार हटाकर, और शब्द का उपदेश करके, घट में चाँदना करे, और आहिस्ते २ तमोगुनी रचना यानी बिकारों को, जैसे काम क्रोध लोभ मोह अहंकार और ईर्षा वग़ैरे को घटाकर सतोगुनी अंग जैसे सील संतोष क्षिमा दीनता और प्रेम को पैदा करे। ऐसे निज धाम के बासी और उपदेश करनेवाले का नाम संत सतगुरु है ॥

३—जब तक ऐसे संत सतगुरु नहीं मिलेंगे, तब तक निजधाम का भेद और जुगत रास्ता तै करके वहां पहुंचने की हरगिज़ मालूम नहीं होगी। क्योंकि सिवाय भेदी और बासी उस धाम के, और किसकी ताक़त है कि जो भेद और जुगत को बतावे, और अपनी मदद से रास्ता तै करावे ॥

४—अब समझना चाहिये कि जैसे आदि शब्द की धार ने (जो कि चेतन्य की धार है) प्रथम चांदना करके सत्त का प्रकाश किया, और प्रेम और आनंद का भंडार खोला, इसी तरह जब तक कि संत सतगुरु के बचनों की धार से घट का अंधकार नहीं हटाया जावेगा, तब तक जीव को असली सत्त और असत्त की तमीज़ नहीं होगी। और जब तक कि उनसे सुरत शब्द मारग का उपदेश लेकर अंतर में अभ्यास नहीं करेगा, तब तक शब्द का चांदना नहीं होगा, और प्रेम और आनंद प्रघट नहीं होंगे, और रास्ता नहीं चलेगा ॥

५—इस वास्ते हर एक जीव को, जो अपना सच्चा कल्यान और उद्धार चाहे, ज़रूर है, कि पहिले संत सतगुरु से मिले, और उनका सतसंग करके और उपदेश लेकर, अंतर अभ्यास सुरत शब्द जोग का शुरू करे। और जो कोई और लोगों से (जिनका नाम गुरू हरगिज़ नहीं हो सक्ता) समझौती लेकर, परमार्थी कार्रवाई करेगा, वह निज घर में नहीं पहुँचेगा, और रास्ते में माया के घेर में, कहीं न कहीं अटक कर रह जावेगा, और जनम मरन और दुख सुख के चक्कर से उसका बचाव हरग़िज़ नहीं होवेगा, क्योंकि गुरू

नाम अंधेरे में चांदना करनेवाले, और निजघर का रास्ता तै कराने वाले का है, सो जहाँ तक माया का घेर है, वहां तक अंधेरा है, और उस अंधेरे में सिर्फ़ शब्द ही प्रकाश करनेवाला है, सो जो कोई शब्द का भेद बतावे, और उसको प्रघट कराके घट में चांदना करे, और असली सत्तपद में पहुँचावे, वही सच्चा गुरू है। और किसी का नाम सच्चा गुरू नहीं हो सक्ता है ॥

६—अब समझो कि जीव को ऐसे गुरू की वास्ते निजघर में पहुँचने के ख़ास ज़रूरत है कि नहीं ॥

२—दूसरे कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की भक्ती की ज़रूरत ॥

७—कुल्ल जीव पहिले मा बाप के हुकम में चलते हैं, फिर वास्ते सिखाने बिद्या और हुनर के उस्ताद के सुपुर्द किये जाते हैं, बाद इसके हाकिम या अपने आक़ा की ताबेदारी करते हैं, और अपने घर के कारोबार इस्त्री की सलाह से करते हैं, तब दुनिया और ग्रहस्त के सब काम दुरुस्ती से चलते हैं, और उनको उन कामों के अंजाम देने की दुरुस्त समझ बूझ आती है ॥

८—इसी तरह जब परमार्थी जीव संत सतगुरु और कुल्ल मालिक की आज्ञा में बर्तेगा, और उनकी बानी

और बचन से समझ बूझ दुरुस्त हासिल करेगा, और उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत लावेगा, तब परमार्थ की कार्रवाई दुरुस्ती से बन पड़ेगी, यानी भक्ती की रीत में मुनासिब तौर से बर्ताव कर सकेगा, और अंतर अभ्यास में तरक़्क़ी होती जावेगी ॥

६—चाहे कोई कितना ही सतसंग और अंतर अभ्यास करे, लेकिन जो संत सतगुरु के चरनों में प्रीत और प्रतीत न होगी, और उनकी अज्ञा के मुवाफ़िक़ कार्रवाई नहीं करेगा, और भक्ती के क़ायदों में थोड़ा बहुत दुरुस्ती के साथ नहीं बर्तेगा, तब तक उसकी असली तरक़्क़ी परमार्थ में नहीं होगी, यानी मन की चालढाल नहीं बदलेगी, और न उसके घट में प्रेम जागेगा और न अंतर और बाहर के सतसंग में रस और आनंद मिलेगा ॥

३—तीसरे भक्ती के ख़ास अंग यह हैं ।

१०—कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल को सर्ब समर्थ और अपने घट में मौजूद, और हर वक़्त और हर जगह हाज़िर नाज़िर जान्ना, और उनकी मौज के साथ जहां तक बन सके मुवाफ़क़त करना । और संसार और भोगों की तरफ़ से किसी क़द्र बैराग और उदासीनता रखना संत सतगुरु के चरनों में दीनता और अनुराग

बढ़ाते रहना, और उनको अपना सच्चा हितकारी और उद्धारकरता मानना ॥

४—चौथे कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में गहरी प्रीत और पकड़ ॥

११—जैसे कि ग्रहस्ती को अपने इस्त्री और पुत्र और कुटम्ब परवार में गहरा मोह और प्यार और मज़बूत बंधन होता है, और उसके सबब से वह चाहे जहां परदेश में जावे, और कितनेही दिन वहां रहे, लेकिन किसी में उसका बंधन नहीं होता, और अपनी पूंजी अपने घर को भेजता रहता है और हमेशा मुंतज़िर इस बात का रहता है कि क़ब मौक़ा मिले और छुटकारा होवे, तबही घर को जावे और अपने कुटम्ब से मिले ॥

१२—इसी तरह सच्चे परमार्थी का बंधन संत सतगुरु और उनके सतसंग में होता है, कि सिवाय उनके और कोई संग उसको प्यारा नहीं लगता और हमेशह इरादा और कोशिश अपने निजघर में जाने की करता रहता है, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के दर्शनों की तड़प हिरदे में लगी रहती है ॥

१३—इस बंधन और शौक़ का फ़ायदा यह है कि उस परमार्थी का मन और किसी जगह इस संसा[र] में ऐसा मज़बूत नहीं बँधता, और चित्त किसी

यानी माया और उसके पदार्थों में नहीं जाता। अपने प्रीतम और निजघर की याद ज़बर रहती है, और अंतर में थोड़ा बहुत रस लेता रहता है, कि और जगह उसको चैन नहीं आता ॥

१४—जब तक इस क़द्र गहरी प्रीत और पकड़ चरनों में कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के न होगी, तब तक ख़ौफ़ रहता है, कि माया के ज़बर भोग मिलने के वक़्त झोका खा जावे, और अपने प्रीतम की प्रीत ढीली करके, माया के पदार्थों और संसार की मान बड़ाई में लिपट जावे ॥

५—पाँचवें सुरत शब्द मारग के अभ्यास में ज़रूरत शौक़ और मिहनत की वास्ते प्राप्ती रस और आनंद के ॥

१५—जैसे दुनिया के लोग अपने २ पेशे और रोज़गार में निहायत तवज्जः और मिहनत के साथ कार्रवाई करते हैं और जो फ़ायदा यानी धन उस्से प्राप्त होता है उस्से आप और अपने कुटम्ब को पालते हैं, और भोग बिलास करके मगन रहते हैं। और आइन्दा अपने काम में तरक़्क़ी हासिल करते हैं ॥

१६—इसी तरह परमार्थी शख़्स भी अपने अभ्यास मिहनत करके रस और आनंद लेता है, और वही आनंद सुरत और मन का अहार है और जिस क़द्र यह आनंद बढ़ता है उसी क़द्र उसका असर इंद्रियों

और देह तक पहुंच कर, उनको निर्मल और ताज़ा करता है। और कुल्ल मालिक और संत सतगुरु के चरनों में प्रीत और प्रतीत को बढ़ाता है कि जिस्से आइंदा अभ्यास की तरक़्क़ी होती जाती है ॥

६—छठे कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की सरन और उनकी दया का भरोसा ॥

१७—जैसे दुनिया के लोग अपनी बिद्या और बुद्धी और पौरुख और ताक़त का बल और भरोसा रख के दुनिया के काम करते हैं और ख़्याल करते हैं कि वे अपनी समझ बूझ और चतुराई से कैसाही काम आकर पड़े उसको दुरस्ती से अनजाम देंगे ॥

१८—इसी तरह सच्चे परमार्थी को चाहिये कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की सरन और उनकी दया का भरोसा दृढ़ करे, कि जिसके बल से वह मन और माया के बिघनों से बचकर और अपना अभ्यास और भक्ती दुरस्ती से करके एक दिन अपने जीव का कारज बना लेगा, और भक्ती के अंग और रीत में, चाहे जैसे कठिन होवें, उनकी मेहर और दया से आसानी से बर्त सकेगा ॥

१९—बर ग़ैसरन और दया के यह रास्ता ... निहायत मुशकिल है बल्कि नामुमकिन है। पुर्षार्थ और बल का आसरा लेकर अभ्यास

तरक़्क़ी का रास्ता

नहीं है

गालिब

आ-

बन सकेगा। और जो कोई कुल की मरजाद और दुनिया की लाज और दुनियादारों के डर में अटका रहेगा उसके परमार्थ में कसर पड़ेगी, यानी प्रेमाभक्ती के अंगों में जैसा चाहिये नहीं वर्त सकेगा। और इसी तरह कुटम्ब परवार का विशेष मोह और डर परमार्थ में बहुत बिघन और ख़लल डालता है इस वास्ते ज़रूरत के मुवाफ़िक़ सब से प्रीत करना और ब्यौहार में बर्तना जायज़ और दुरुस्त है. लेकि...

सान ...

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

छांटे हुए शब्द प्रेमबानी जिल्द ४

शब्द १

मन तू करले हिये धर प्यार ।
राधास्वामी नाम का आधार ॥
राधास्वामी नाम है अगम अपारा ।
जो सुमिरे तिसे लेहिं उबारा ॥
सुन घट में अनहद झनकार ॥ १ ॥

राधास्वामी धाम है ऊंच से ऊंचा ।
सन्त बिना कोइ जहां न पहुंचा ॥
दरस किया जाय कुल करतार ॥ २ ॥

राधास्वामी नाम की महिमा भारी ।
शेष महेश कहत सब हारी ॥
लीला अपर अपार ॥ ३ ॥

राधास्वामी परम पुरुष जग आये ।
हंसजीव सब लिये मुकताये ॥
और जीवन पर बीजा डार ॥ ४ ॥

नाम की महिमा बहुबिध गाई ।
मुक्ती की यही जुगत बताई ॥
सुमिरो राधास्वामी बारम्बार ॥ ५ ॥
राधास्वामी नाम का भेद सुनाया ।
सुरत शब्द मारग दरसाया ॥
धुन संग सुरत चढ़ाओ पार ॥ ६ ॥
धुन आत्मक जो राधास्वामी नामा ।
तिस महिमा कस कहूं बखाना ॥
जो सुने सोइ जाय निज घरबार ॥ ७ ॥

शब्द २

सुरतिया हरख रही ।
निरखत गुरु चरन बिलास ॥ १ ॥
बिगसत खेलत संग गुरू के ।
दिन २ बढ़त हुलास ॥ २ ॥
प्रीत प्रतीत बढ़त चरनन में ।
तजत काम और भोग बिलास ॥ ३ ॥
उमंग उमंग कर गावत बानी ।
मगन होय रह गुरु के पास ॥ ४ ॥
चित दे सुनत बचन सतसंग के ।
चेत करत घट में अभ्यास ॥ ५ ॥
मन और सुरत सिमट कर चालें ।
तजत देश जहां माया बास ॥ ६ ॥

तीसर तिल धस सुनती बाजा ।
लखती जहँ वहँ जोत उजास ॥ ७ ॥
गगन ओर धावत स्रुत प्यारी ।
पावत काल तिरास ॥ ८ ॥
अधर चढ़त सुन २ धुन अच्छर ।
सुन्न में हंसन संग बिलास ॥ ९ ॥
भंवरगुफा धुन सुन गई आगे ।
निज सूरज संग मिला अभास ॥ १० ॥
अलख अगम लख हुई अचिंती ।
मिलगई प्रेम आनन्द की रास ॥ ११ ॥
प्रेम पियारी सुरत रंगीली ।
प्यारे राधास्वामी की हुई ख़वास ॥ १२ ॥
दरशन कर अतिकर मगनानी ।
पाय गई धुरधाम निवास ॥ १३ ॥
प्रेम प्रताप छाय रहा घट में ।
प्रेम स्वरूप किया हिरदे बास ॥ १४ ॥
यह गत मत है अगम अपारा ।
पावे मेहर से कोइ निज दास ॥ १५ ॥
कर सतसंग गहे स्वामी सरना ।
सुरत चढ़ावे निज आकाश ॥ १६ ॥
सुरत होय तब स्वामी प्यारी ।
प्रेम की दौलत पावे ख़ास ॥ १७ ॥

राधास्वामी मेहर दृष्टि से हेरें।
प्रेम दुलार होय ख़ासुल-ख़ास ॥१८॥

जो अस दुर्लभ भक्ति कमावे।
जावे निज घर बिन परियास ॥१९॥

सुरत निमानी मेरी स्वामी सँवारी।
गावत उन गुन स्वाँसो स्वाँस ॥२०॥

प्रेम दुलारी शब्द पियारी।
होय निहाल बैठी चरनन पास ॥२१॥

दयाल सरन ले काज बनाया।
तज दिया जग का मोह और आस ॥२२॥

प्रेम अधार जियत सुर्त प्यारी।
जग से रहती सहज उदास ॥२३॥

धूम हुई भक्ती की भारी।
करम भरम सब हो गये नाश ॥२४॥

प्रेम अधारी सुरत सिरोमन।
आरत दीपक करती चास ॥२५॥

सब सखियाँ मिल आरत गावें।
राधास्वामी चरनन धर बिसवास ॥२६॥

दया करी राधास्वामी प्यारे।
घट घट कीना प्रेम प्रकाश ॥२७॥

शब्द ३

सुरतिया वार रही ।
तन मन गुरु चरन निहार ॥ १ ॥
बिमल बैराग धार कर मन में ।
छोड़ दिया संसार ॥ २ ॥
मोह जाल के बंधन काटे ।
गुरु सेवा में रहे हुशियार ॥ ३ ॥
सतसंग बचन धार कर चित में ।
मन को छिन छिन डारत मार ॥ ४ ॥
भोग अंक को काटत छिन छिन ।
राधास्वामी नाम जपत हर बार ॥ ५ ॥
ध्यान लगाय बढ़ावत प्रीती ।
शब्द सुनत हियरे धर प्यार ॥ ६ ॥
घंटा संख मचावत शोरा ।
छिटक रहा घट जोत उजार ॥ ७ ॥
अनहद शब्द लगा अब गरजन ।
चढ़ कर पहुंची गगन मँझार ॥ ८ ॥
द्वारा फोड़ गई अब सुन में ।
न्हाइ मानसर मैल उतार ॥ ९ ॥
भँवरगुफा का देख उजारा ।
बीन सुनी सतगुरु दरबार ॥ १० ॥

अलख अगम के पार चढ़ाई ।
राधास्वामी चरन मिला आधार ॥ ११ ॥
तन मन तोड़ किया जब सतसंग ।
भोग बासना दई निकार ॥ १२ ॥
गुरु चरनन में प्रीत घनेरी ।
कीनी हिय से तन मन वार ॥ १३ ॥
दीन ग़रीबी धार चित्त में ।
मन के मान दिये सब झाड़ ॥ १४ ॥
तब गुरु परसन होय मेहर से ।
अंग लगाया किरपा धार ॥ १५ ॥
अस सतसंग करे जो कोई ।
सोई जावे भौजल पार ॥ १६ ॥
राधास्वामी परम गुरू दातारा ।
पहुंचावें फिर निज घरबार ॥ १७ ॥
होय निचिंत बसे सुख सागर ।
हरदम राधास्वामी दरस निहार ॥ १८ ॥
अचरज नाम और अचरज रूपा ।
अचरज मेहर का वार न पार ॥ १९ ॥
लख लख भाग सरावत अपना ।
राधास्वामी चरन पकड़ रही सार ॥ २० ॥
राधास्वामी दयाल सरन हिय धारी ।
उन मेहर से दिया मेरा काज संवार ॥ २१ ॥

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

बचन-३४

सहज उपदेश

फ़ेहरिस्त मज़मून सहज उपदेश

(१) रचना का कुल्ल मालिक और करतार ज़रूर है ॥

(२) सुरत यानी जीव कुल्ल मालिक की अंस है ॥

(३) मन और सुरत और इन्द्रियों का बंधन जगत और उसके भोगों में और उसके सबब से दुख सुख सहना ॥

(४) तीन ताप दुख का रूप हैं ॥

(५) दुख सुख और जनम मरन से बग़ैर दया संत-सतगुरु के छुटकारा नहीं हो सक्ता है ॥

(६) बर्णन इस बात का कि वास्ते प्राप्ती सच्चे परमार्थ के संत सतगुरु से मिल कर उपदेश लेना ज़रूरी है ॥

(७) सिफ़त पूरे और सच्चे गुरू की ॥

(८) जब पूरे गुरू मिलें और कुल्ल मालिक का भेद देवें तब उनके साथ किस तरह बर्ताव करना चाहिये ॥

(६) जीव की जाग्रत के समय आंख में बैठक है और वहीं से खिंच जाना अंदर और ऊपर की तरफ़ वक़्त नींद और मौत के और बेख़बर हो जाना देह और दुनिया के दुख सुख से ॥

(१०) टेकियों की मूर्खता और अहंकारी पन और बाद बिबाद करने की आदत और नाक़ाबिलियत वास्ते करने किसी क़िसम के अंतरी अभ्यास के या शामिल होने संतों के सतसंग के ॥

(११) ज़ात पांत के टेकी भी वैसे ही मूर्ख और नादान हैं और अपने परमार्थी नफ़े और नुक़सान से ग़ाफ़िल, यह लोग संतों के दर्शन और सतसंग के फ़ैज़ और फ़ायदे से हमेशा महरूम रहेंगे ॥

(१२) बाज़े लोगों के ओछे और नाक़िस ख़्याल निसबात औरतों के परदे के और हारिज होने उनकी तरक़्क़ी इलम और अक़्ल समझ और तजर्बह और सच्चे परमार्थ में ॥

(१३) एक गुरू करके दूसरा गुरू न करने के बयान में ॥

(१४) क़ायदा बर्ताव का सतसंग में और पूरे गुरू के साथ ॥

(१५) आरती का क़ायदा और फ़ायदा ॥

(१६) हार चढ़ाने का फ़ायदा ॥

(१७) मत्था टेकने और बंदगी करने का फ़ायदा ॥

(१८) परशादी और चरनामृत का फ़ायदा ॥

(१९) ज़ात का भेद और उसका मुक़र्रर होना करम के बमूजिब ॥

(२०) सेवा का वर्णन ॥

(२१) महिमा सतसंग की ॥

(२२) महिमा अंतर अभ्यास यानी अंतरी सतसंग की ॥

(२३) जीवों का बेजा और ग़लत भरम, और ख़ौफ़ निसबत राधास्वामी मत में शामिल होने के ॥

(२४) दुनिया के लोगों का धरम और ईमान ॥

(२५) प्रेम की महिमा ॥

(२६) सरन की महिमा ॥

(२७) हिदायत यानी उपदेश कुल्ल जीवों को ॥

(२८) गोश्त खाने का नुक़सान ॥

(२९) शराब और भंग और दूसरे नशों के खाने पीने का नुक़सान ॥

(३०) तितिम्मा ॥ यानी आख़ीर बचन ॥

बचन-३४
सहज उपदेश

(१) रचना का कुल्ल मालिक और करतार ज़रूर है।

१—समझवार और बिचारवान मनुष्य को अनेक प्रकार की ज़मीनी और आसमानी रचना, और उसकी भारी और बारीक कारीगरी को देखकर मन में फ़ौरन यह ख़्याल पैदा होगा कि उसका करता ज़रूर है और वह सर्ब समर्थ और अंतरजामी और सर्व व्यापक पुर्ष है ॥

२—सबूत इस बात का कि कोई कुल्ल मालिक ज़रूर है यह है कि हरचंद चेतन्य सब जगह मौजूद है, मगर बग़ैर मदद अपने से बिशेष चेतन्य के कुछ कार्रवाई रचना और उसके पालन पोषन वग़ैरे की नहीं कर सक्ता। जैसे इस लोक का चेतन्य बग़ैर मदद अपने विशेष चेतन्य के, जिसकी धार इस सूरज से आती है, कोई कार्रवाई नहीं कर सक्ता है, इसी तरह से यह सूरज अपने विशेष चेतन्य निरंजन के आसरे, और वह ब्रह्म रूपी सूरज और फिर वह सत्त नाम रूपी निज सूरज, और फिर वह भी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के आधीन है ॥

३—इस सूरज के विशेष चेतन्य सूरज का पता नजूमी देते हैं, और ब्रह्म रूपी सूरज की महिमा जोगीश्वर ज्ञानियों ने की है, और ब्रह्म के परे सत्त नाम रूपी सूरज का भेद संतों ने बर्नन किया है, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का पद, कुल्ल मालिक ने आप परम संत रूप धारन करके प्रघट किया।

४—इन अस्थानों या सूरजों से जो चेतन्य धार आती है, वह अपने २ समान चेतन्य सूरज मंडल की रचना की कुल्ल कार्रवाई में मदद देती है। और इन हर एक अस्थानों का जो धनी है, वही नीचे की रचना का मालिक और मुख़्तियार है, और राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक हैं, और सिर्फ़ परम संत उनके धाम तक पहुंचे हैं।

५—जो आदि धार राधास्वामी धाम से निकली वही कुल्ल रचना की करतार है, यानी उस धार से पहिले सत्तलोक तक यानी दयाल देश की रचना हुई। और सत्तलोक से जो दो धार प्रघट हुईं, उन से दूसरे दरजे (ब्रह्मान्ड) यानी निरमल चेतन्य और शुद्ध माया देश की रचना हुई और निरंजन जोत से जो तीन धारें प्रघट हुईं उनसे तीसरे दरजे (पिंड)

यानी निर्मल चेतन्य और मलीन माया देश की रचना हुई ।

६—हर चंद कि निर्मल चेतन्य सब जगह मौजूद है, लेकिन शुद्ध माया देश यानी दूसरे दरजे में शुद्ध माया के ग़िलाफ़ों से, और मलीन माया देश यानी तीसरे दरजे में मलीन माया के ग़िलाफ़ों से ढका हुआ है। इस सबब से माया देश में नीचे के दरजे का चेतन्य समान, और ऊपर के दरजे का बिशेष कहलाता है क्योंकि बग़ैर मदद बिशेष चेतन्य के वह पूरी तौर से रचना की कारवाई नहीं कर सक्ता ॥

७—हर एक मंडल और दरजे में जो रचना है उसको ग़ौर से देखने और बिचारने से भारी कारीगरी और समर्थता और इरादा या मतलब रचना करनेवाले का साफ़ पाया जाता है। यह समर्थता कुल्ल मालिक की इन कामों में साफ़ ज़ाहिर है, जैसे माया और उसके इजज़ा तत्त और गुन वग़ैरे को पैदा करना, और उस मसाले से अनेक तरह के रूप और रंग निहायत बारीकी और कारीगरी से बनाना, और फिर उनसे और उनके अंग २ से जुदा २ काम लेना। जो नज़र ग़ौर से देखा जाय तो यह क़ैफ़ियत कुल्ल

रचना में, और भी एक २ देह और उसके बनाव में साफ़ मालूम होती है ॥

८—जब समर्थता और कारीगरी और इरादा और मतलब कुल्ल आसमानी और ज़मीनी रचना में पाया जाता है, और तीनों शक्ती यानी पैदा करने और पालन पोषन करने और सिंघार करने की, हर जिस्म यानी हरएक नाम और रूप में कारवाई कर रही हैं, फिर साबित हुआ कि कोई कुल्ल मालिक इस रचना का ज़रूर है, और वह सर्ब समर्थ और भारी कारीगर और सब जगह मौजूद और अंतरजामी और सर्ब ज्ञानी और अमर और अजर है।

९—यह कुल्ल मालिक घट २ में मौजूद है, और ऊंचे से ऊंचा उसका धाम है, और राधास्वामी उसका नाम है ॥

१०—यह नाम धुन्यात्मक है, यानी इसकी आवाज़ बे ज़बान और बे बाजे के, ऊंचे मंडल में हर एक के घट में हर वक़्त हो रही है। और गहरे अभ्यासी और प्रेमी उसको अपने अंतर में सुनते हैं। यह नाम किसी मनुष्य का धरा हुआ नहीं है, कुल्ल मालिक ने आप संत रूप धारन करके, जीवों के उद्धार के निमित्त उसको आप अति दया करके प्रघट किया।

११—मालूम होवे कि मनुष्य का स्वरूप कुल्ल रचना का नमूना है, और जितने मंडल बाहर हैं, वे सब छोटे पैमाने के मुवाफ़िक़ घट २ में मौजूद हैं, और बाहर के मंडलों से मुवाफ़िक़त रखते हैं, यानी एक हो रहे हैं। जैसे सात खन के मकान की हवा, बाहर की हवा के मंडल से, अपने २ दरजे के मुवाफ़िक़ मेल रखती है, और एक हो रही है ॥

सुरत यानी जीव किसको कहते हैं और कहां से आये।

१२—आदि में सब जीव धुर मुक़ाम से आये, जैसे सूरज और सूरज की किरन, वह किरन यानी आदि धार जब माया के घेर में उतरी, तब माया के ख़ोल उस पर चढ़ते चले आये। इन ख़ोलों का नाम देही है। जिस मंडल में सुरत उतर कर ठहरी उसी मंडल के माया के मसाले की देह उसकी बन गई, और उसमें बैठ कर सुरत उसी रचना के साथ बर्ताव करने लगी, और उसमें किसी क़दर बंध गई।

१३—इसी तरह इस लोक में उतर कर मनुष्य देह धारन करी, और उसमें उसका बंधन हो गया और ऊपर के मंडलों के पट बंद हो गये, यानी सुरत का रुख़ नीचे की तरफ़ हो गया। ऐसी सुरतों को जिनका देह में और भी इस लोक की रचना में बंध

हो गया जीव कहते हैं, यानी उनको अपने मालिक और निज धाम की सुध बिसर गई ॥

संत सतगुरु किसको कहते हैं ।

१४—जो सुरत कि उस आदि धाम से एक दम उतर कर बा ख़बर और होशियार आई, और नर रूप धारन किया, उसके घट में सब पट खुले रहते हैं, यानी जब वह चाहे धुर पद में चली जावे और कुल्ल मालिक का दर्शन करे, और जब चाहे जब पिंड में उतर कर इस दुनिया की सैर करे। ऐसी सुरत को संत और सतगुरु कहते हैं, और उसका कुल्ल मालिक के साथ बराबर मेल रहता है, और वह किसी मंडल की रचना या इस दुनिया में नहीं फंसती है ॥

(२) सुरत यानी जीव कुल्ल मालिक की अंश है ।

१५—दफ़ा १२ और १३ में लिखा गया है कि सब जीव बतौर किर्नियों के आदि धाम से आये और माया के घेर में उन पर दरजे ब दरजे ख़ोल चढ़ते चले आये, और इन ख़ोलों यानी देहियों में उनका बंधन हो गया, पर जौहर उनका और कुल्ल मालिक का एक है, और सूत उनका कुल्ल मालिक से लगा हुआ है, पर रास्ते में जाबजा पट लगे हुये हैं, क्योंकि धार का रुख़ नीचे और बाहर की तरफ़ हो रहा है ॥

१६—अब मालूम होवे कि कुल्ल रचना हरएक मंडल में सुरत यानी आदि धार ने जो धुर पद से आई करी है। और इस लोक में भी साफ़ नज़र आता है कि एक २ सुरत ने अपने क़याम के वास्ते, यहाँ एक २ पिंड रचा, और उस पिंड की सम्हाल और पालन पोषन उसी की शक्ती से हो रहा है, यानी तीनों गुन और पांचो तत्त और उनकी प्रकिरतियां और अनेक शक्तियां जैसे बिजली की शक्ती और रोशनी की शक्ती और खैंच शक्ती और हटाव शक्ती और बनाव शक्ती वग़ैरः सब ताबेदारी में सुरत के जब कि उसने पहिले ही अपना ज़हूर किया, हाज़िर होकर पिंड के बनाव और सम्हाल में मदद देती हैं, और सब आपस में रल मिल कर काम करती हैं। और जब सुरत पिंड को छोड़ती है, तब वे सब आपस में लड़ भिड़ कर पिंड को बिगाड़ देती हैं, यानी उसका अभाव हो जाता है ॥

१७—इस्से ज़ाहर है कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल, अपनी किर्नियों या धारों के वसीले से यहां सब जगह मौजूद हैं। और उन्हीं किर्नियों की मार्फ़त यहां अनेक प्रकार की रचना करा रहे हैं, और जब उन किर्नियों यानी सुरतों का पिंडों से वियोग होता

है, तब उन देहियों का अभाव हो जाता है और कुल्ल मसाला माया का जैसे तत्त और गुन और शक्तियाँ सुरत के आधीन हैं, यानी उसकी मौज या हुक्म अनुसार कार्रवाई कर रहा है ॥

१८—यह बात दरख़्त की पैदायश पर नज़र करने से, बहुत आसानी से समझ में आसक्ती है। जिस वक़्त कि किसी बीज में से आदि धार निकली यानी कुला फूटा और सुरत ने अपना ज़हूर किया, उसी वक़्त से तीनों गुन और पांचों तत्त और सर्ब शक्तियाँ वहां मौजूद होकर, उस दरख़्त के बढ़ाव और बनाव में मदद देती हैं, और इसी आकाश से मसाला खींच कर लेती हैं, और फ़ज़ूल माद्दा ख़ारिज करती हैं, और वही आदि धार यानी कुला जो फूटा है, बढ़ता हुआ कुल्ल दरख़्त का करता है। और उस दरख़्त के रूह की धारें नसाजाल के वसीले जड़ से पत्ती तक फैली हुई हैं ॥

१९—जब वह दरख़्त मर जाता है यानी उसकी रूह खिँच जाती है, उस वक़्त उसका जिस्म बतौर ईंधन के पड़ा रहता है, चाहे जला दिया जावे या कुछ अर्सह में गल कर ख़ाक हो जावे ॥

२०—जो माया और उनका मसाला और कुल्ल शक्तियां और गुन और तत्त वग़ैरे सुरत के आधीन और ताबेदार न होते, तो तीन लोक की रचना भी न होती और जो कि कुल्ल मालिक का सत्त चित्त आनंद रूप है, इस वास्ते सुरत का भी वही स्वरूप है, यानी इस रचना में वही चेतन्य है और सर्व रस और आनंद उसी की धार में हैं और इस रचना में सत्त भी वही है, यानी सुरत ही रचना करती है और उसी के सबब से सब रचना ठहरी हुई और क़ायम नज़र आती है और उसके बियोग में उस रचना का यानी देहियों का अभाव हो जाता है ॥

२१—यही सुरत संत सतगुरु की कृपा और सतसंग से उलट कर अपने निज घर में पहुंच सक्ती है। पर माया का मसाला जो कि जड़ है, और जिस्से देहियां और उनके अनेक औज़ार, जैसे इन्द्रियां वग़ैरे बने हैं उलट नहीं सक्ता यानी अपनी हद्द के पार नहीं जा सक्ता ॥

२२—यह सुरत अंस मुवाफ़िक़ अपने अंसी यानी कुल्ल मालिक के अमर और अजर है। और जब एक देह को छोड़ती है, तब अपनी चाह और बासना के मुवाफ़िक़ दूसरी देह धारन करती है। क्योंकि

जब तक कुल्ल मालिक का भेद लेकर, और जुगत दरियाफ़्त करके उस तरफ़ को चलना शुरू न करेगी तब तक उसका बंधन देह और दुनियां से नहीं छूटेगा, और बारंबार देह धरनी पड़ेगी ॥

(३) मन और सुरत और इन्द्रियों का बंधन जगत और उसके भोगों में और उसके सबब से दुख सुख सहना ।

२३—सुरत का पिंड में बैठने और इन्द्रियों के वसीले से संसार में बर्ताव करने से, देह और दुनिया में बंधन हो गया। और जो कि देह और इन्द्रियां माया के मसाले से बनी हुई हैं, इस वास्ते उनको इसी देश की रचना में से अहार लेना ज़रूर पड़ा और यही इन्द्रियों के भोग बंधन का कारन हो गये ॥

२४—जब किसी इंद्री के अहार या भोग की ख़्वाहिश पैदा होती है, जो वह ख़ातिर ख़्वाह मिल गया तौ सुख नहीं तौ दुख होता है, या जब किसी औज़ार में देह के कोई ख़लल या बिगाड़ हो जाता है तब भी दुख होता है, ॥

२५—यह हाल दुख सुख का जो निजदेह के साथ तअल्लुक़ रखता है बयान हुआ। इसी तरह हर एक देह को जो जानदार है दुख सुख होता है, और जिसका जिस दूसरी देह या देहियों में बंधन है, उसको भी

उसी क़दर उसका असर पहुंचता है। इस सबब से हर एक शख़्स अपने निज करमों का, और भी दूसरे के करमों का फल जो दुख सुख है भोग करता है, और सबब इस भोगने का बंधन या लाग और लगन है ॥

(४) तीन ताप दुख का रूप हैं ॥

२६—ऐसे कम लोग हैं जिनको सुख बिशेष हासिल है और दुख बहुत कम, लेकिन ऐसे जीव कसरत से हैं जिनकी ख़्वाहिशें भोगों की ज्यों की त्यों पूरी नहीं होती हैं, और इस वास्ते दुख सहते हैं ॥

२७—यह दुख तीन क़िस्म के हैं, यानी आधि, ब्याधि, और उपाधि, आधि मन के दुख को कहते हैं, और ब्याधि देह में रोग को कहते हैं, और उपाधि बाहर के क़ज़िये और झगड़े को कहते हैं। इन तीन ताप से इस रचना में कोई जीव खाली नहीं रहता, यानी अपने २ चक्कर के मुवाफ़िक़ यह ताप सब जीवों को ब्यापते हैं, चाहे अमीर होवे या ग़रीब, और सिर्फ़ इसी देह में नहीं बल्कि दूसरी देहों तक करम का फल असर करता है ॥

(५) सुख दुख और जनम मरन में बग़ैर दया संत सतगुरु के छुटकारा नहीं हो सक्ता है ॥

२८—अब जो कोई इन तीनों ताप के असर से और

भी जनम और मरन के कष्ट और कलेश से बचना चाहे, उसके वास्ते संतों ने यही जतन फ़रमाया है, कि जैसे बने तैसे देह और दुनियां के बंधनों को ढीला करे, और चित्त को राधास्वामी दयाल के चरनों में जोड़े। और यह बात संत सतगुरु के सतसंग में शामिल होने और उनके चरनों में प्रीत करने से हासिल हो सक्ती है। बग़ैर उनकी दया के किसी का छुटकारा इन दुक्खों से मुमकिन नहीं है ॥

(६) बर्तन इस बात का कि वास्ते प्राप्ती सच्चे परमार्थ के, संत सतगुरु से मिलकर उपदेश लेना ज़रूरी है ॥

२९—दुनिया और जीवों के हाल को देखकर मालूम होता है कि कोई काम बग़ैर गुरू या उस्ताद या सिखानेवाले के कोई नहीं सीख सक्ता, फिर सच्चे परमार्थ की कार्रवाई बग़ैर मिलाप सच्चे गुरू के, और उनसे उपदेश लेकर कमाई करने के कैसे मुमकिन है ॥

३०—जो कोई ऐसा ख़्याल करते हैं कि गुरू की कुछ ज़रूरत नहीं है, और पोथियां पढ़कर ज़ाहरी कार्रवाई आप कर सक्ते हैं, उनको यह मालूम नहीं है कि सच्चा परमार्थ किसे कहते हैं। वे लोग सिर्फ़ बाहरी करतूत को परमार्थ समझते हैं, जैसे पोथी पढ़ना और पढ़ाना, भजन गाना और प्रार्थना करना, और ब्रत

रखना, और ज़बान से या स्वांसा और मन से नाम का जाप करना, या बेठिकाने मूर्त या किसी और स्वरूप या अरूप ब्रह्म का ध्यान करना, या तीर्थों और मंदिरों में जाना और ख़ैरात करना, या पाठशाला धरमशाला कुयें बावड़ी बाग़ या और कोई मकान वास्ते जीवों के उपकार और आराम के बनाना वग़ैरे २ ॥

३१–यह सब काम हर कोई जिसने थोड़ी बहुत विद्या पढ़ी है बग़ैर मदद गुरू या उस्ताद के पोथियां पढ़ कर, और बाहरमुखी परमार्थियों की चालढाल देखकर आसानी से कर सक्ता है, लेकिन सच्चा परमार्थ बग़ैर सच्चे और पूरे गुरू के कोई नहीं कमा सक्ता, क्योंकि उसमें कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के धाम और उसके रास्ते और मंज़िलों का भेद लेकर, निज घर की तरफ़ चलना पड़ता है, और वह चाल बग़ैर मालूम होने जुगत और सवारी के, और मिलने मदद के ऐसे शख़्स से जो आप रास्ता तै कर चुका है कोई नहीं चलसक्ता। और जो कार्रवाई कि बाहर मुखी परमार्थी लोग करते हैं, उसमें चलना और चढ़ना बिल्कुल नहीं है, और न सच्चे मालिक के धाम का पता और भेद है ॥

[७] सिफ़त सच्चे और पूरे गुरू की ।

३२—गुरू नाम उसका है कि जो अंधेरे में चांदना करे और रास्ता बतावे, और उस रास्ते पर ख़ास जुगत के साथ चला कर निज धाम में पहुंचावे। सो यह सिफ़त पहिले तो कुल्ल मालिक की है, कि जिस ने मौज से अपने चरनों से आदि धार प्रघट करके अँधेरे में चाँदना किया और रचना करी और जीवों को उस धार से मिलाकर अपनी तरफ़ खींचता है, इस वास्ते वही आदि गुरू और परम गुरू है ॥

दूसरे यह सिफ़त संतसतगुरु की है, कि जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के निज पुत्र या मुसाहब हैं, और उसकी मौज से दुनिया में आकर जीवों को उपदेश करके निजधाम में पहुंचाते हैं, यानी अपने बचनों से उनके घट का तमोगुन और अंधकार दूर करके, और रास्ता और जुगत बताकर और मेहर से चांदना करके उनसे रास्ता तै करवाते हैं, और सिवाय उनके जीव के कल्यान के, और कोई मतलब जीवों से नहीं रखते हैं। जब तक ऐसे गुरू नहीं मिलेंगे और रास्ता तै न होगा तब तक किसी जीव का सच्चा उद्धार होना क़ितई मुमकिन नहीं है ॥

———

(८) जब पूरे गुरू मिलें और कुल्ल मालिक का भेद देवें, तब उनके साथ किस तरह बरतावा करना चाहिये ॥

३३—जिस किसी को भाग से सतगुरु मिल जावें, और कुल्ल मालिक का पता और भेद देवें, और जुगत उस्से घट में चढ़कर मिलने की बतावें, तब उसको चाहिये कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में गहरी प्रतीत और प्रीत लावे ॥

३४—प्रतीत की शरह यह है कि उनको, (१) सर्व समर्थ और (२) हाज़िर नाज़िर और (३) हर वक़्त अपने अंग संग समझे। ऐसा यक़ीन मुशकिल से आता है, लेकिन जिसके दिल में थोड़ा बहुत पैदा हुआ, वह उसके मन और उसकी कार्रवाई की गढ़त बहुत जल्द कर देगा। यानी जब वह कुल्ल मालिक को हाज़िर नाज़िर और हर वक़्त अपने संग समझैगा, तो बहुत कम उसका मन नाक़िस तरंगों में बर्ताव करेगा, और कुल्ल मालिक को हर काम में करता धरता मानेगा, और यही भक्तों की चाल और समझ रहती है ॥

३५—प्रीत की शरह यह है, कि कुल्ल मालिक की, ऊपर के लिखे हुये के मुवाफ़िक़, प्रतीत करके, उसके चरनों में इस क़दर प्यार और भाव लावे, कि संसारियों की प्रीत उस्से नीचे दरजे की रहे, और दर्शन की शौक़

ऐसा तेज़ होवे, कि दुनिया और दुनिया के सामान की चाह और प्रीत हलकी पड़ जावे बल्कि फ़ज़ूल ख़्वाहिशें बिल्कुल बंद हो जावें, यानी कोई संसारी चाह, सिवाय औसत दरजे पर, अपने और अपने कुटम्ब के गुज़ारा करने के मन में न रहे। और जो कुछ कि हो रहा है और आइंदह होवे, वह सब अपने मालिक का हुकम और मौज समझे, और उसके साथ जिस क़दर बन सके मुवाफ़क़त करे, यह भक्ति भाव का स्वरूप और बर्तावा है ॥

३६–जो कि संत सतगुरु की महिमां अगम और अपार है, और वह कुल्ल मालिक के निज धाम के बासी हैं, और सिर्फ़ जीवों के कल्यान के वास्ते जब तब संसार में आते रहते हैं इस वास्ते प्रेमी परमार्थी को मुनासिब है कि उनके साथ थोड़ा बहुत उसी मुवाफ़िक़ बर्ताव करे जैसे कुल्ल मालिक की निसबत समझ बूझ धारन की है ॥

(९) जीव की जाग्रत के समय आंखों में बैठक है, और वहीं से खिंच जाना अन्दर और ऊपर की तरफ़ वक्त, नींद और मौत के और बे ख़बर हो जाना देह और दुनिया के दुख सुख से ॥

३७—जाग्रत के समय जीव की बैठक आंखों में होती है, और जब नींद के बस उसका खिंचाव

अंदर में ऊपर की तरफ़ होता है, तब उसको देह और दुनियां के सुख दुख की सुध बिसर जाती है। इसी तरह जब मौत के वक़्त ज़्यादा खिंचाव हो जाता है, तब देह और दुनियां से नाता टूट जाता है, यानी इधर की बिलकुल सुध बुध नहीं रहती है, लेकिन वक़्त खिंचाव के इस क़दर तकलीफ़ मरने वाले को होती है, और ऐसी सूरत उसकी बिगड़ जाती है, कि किसी से देखा नहीं जा सक्ता है ॥

३८—अब ग़ौर करना चाहिये कि आंखों के मुक़ाम पर बैठने से जीव का बंधन देह और दुनियां के साथ पैदा होता है, और यहां से सरकने पर यह बंधन ढीले हो जाते हैं। तो साबित हुआ कि निरबंध होकर सच्चे मुक्त पद में पहुंचने और निज घर में जाने का रास्ता आंख के मुक़ाम से शुरू होता है ॥

३९—जो कोई जीते जी इस रास्ते पर संत सतगुरु से उपदेश लेकर चलना शुरू करेगा, उसको कुछ मालिक की कुदरत अंतर में नज़र आवेगी और मन और सुरत के सिमटाव और चढ़ाई का रस आवेगा, और संसार और उसके भोगों की क़दर उसके चित्तसे कम होती जावेगी, और रफ़्ते २ सतगुरु की दया से एक दिन निज घर में पहुंच कर (जो

माया देश के पार है) बिश्राम पावेगा, और अमर आनन्द को प्राप्त होगा, यानी जनम मरन का चक्कर उसका बंद हो जावेगा ॥

४०—लेकिन जो जीव कि यह कारवाई नहीं करेंगे और उमर भर दुनियां और उसके भोग बिलास में खर्च करेंगे, और उन्हीं की प्राप्ती के लिये जतन करते रहेंगे, तौ अखीर वक़्त यानी मृत्यु के समय उनकी तबीअत का मैलान और झुकाव देह और दुनियां की तरफ़ रहेगा, और जोकि काल पुर्ष उनको पिंड से अलहदा करके ऊपर की तरफ़ खींचेगा, इस सबब से इस खींचा तानी में जीवों को बहुत कष्ट और कलेश होवेगा, जैसा कि उनके मरने के वक़्त की हालत और मरने के बाद की सूरत से ज़ाहर होता है, यानी उनका चेहरा और रंग ऐसा बदल जाता है, कि देखने में डर मालूम होता है। और जब कि वह पिंड के नाके के पार पहुंचेंगे, वहां उनकी देह और दुनियां और उसके सामान की फुरना यानी याद उठेगी, और वह फुरना उनको नीच ऊंच जोन में मुवाफ़िक़ उनकी करनी के जनम देगी। खुलासा यह कि ऐसे जीवों का बारम्बार देह धर कर दुख सुख सहने, और जनम मरन का कष्ट भोगने का चक्कर बराबर जारी रहेगा ॥

४१—जो कोई जीव सिवाय ऊपर की लिखी हुई करनी के, और २ जतन परमार्थ के नाम से बाहर मुखी या अंतर मुखी नीचे के घट में, कर रहे हैं उन को शुभ करम का फल मिलेगा, पर सच्चा उद्धार नहीं होगा, और न उनकी चाल उस रास्ते पर चलेगी जो कि घर की तरफ़ जारी है, और जहां होकर अख़ीर वक़्त पर चलना पड़ेगा ॥

४२—लेकिन जो बाहर मुखी करनी कि अंतर अभ्यास में मदद देनेवाली है, जैसे संत सतगुरु का संग, और उनके प्रेमी जन की सेवा, और संतों की बानी का (जिस में प्रेम और भेद और चितावनी का बर्णन है) पाठ करना, और गाना, और राधास्वामी मत की चरचा करना वग़ैरे उसकी कार्रवाई सच्चे परमार्थ का फल देगी, और संत सतगुरु और सच्चे मालिक की दया की बख़्शिश करावेगी, कि जिस्से भक्ती और प्रेम बढ़ेगा, और मन और सुरत अंतर में सिमटेंगे और चढ़ेंगे ॥

(१०) टेकियों की मूर्खता और अहंकारी पन और बाद बिबाद करने की आदत और नाक़ाबिलियत वास्ते करने किसी क़िस्म के अंतरी अभ्यास के या शामिल होने संतों के सतसंग के।

४३—जो कोई पिछले वक़्त की परमार्थी कार्रवाई

और इष्टों की टेक बांध रहे हैं, और उनकी महिमा करते हैं, पर कोई कार्रवाई उसकी जैसे अष्टांग जोग जिसमें प्राणायाम शामिल है, और मुद्रा का साधन और उनके संजम वग़ैरा और हठ जोग आप नहीं करे, तो ऐसे लोग उन साधनों के फ़ायदे और नुक़सान से बिल्कुल बेख़बर हैं, और न उनको गुरू की ज़रूरत और महिमा की ख़बर पड़ेगी, क्योंकि जितने अंतरी साधन हैं, वह वग़ैर अभ्यासी गुरू के सतसंग और उपदेश और मदद के मुतलक़ बन नहीं सक्ते हैं, और जो कोई पढ़कर और सुनकर कुछ कर रहे हैं, वह ग़लती और धोखे में पड़े हैं, और मुमकिन नहीं कि के सिवाय चंदरोज़ के कोई अन्तर अभ्यास बग़ैर मदद गुरू के जारीरख सकें। ऐसे लोग सच्चे परमार्थ की तरफ़ से नादान और बे परवाह रहते हैं, और इस वास्ते उनके जीव का कारज जैसा चाहिये नहीं बनता। इनकी करनी और रहनी करमी जीवों के मुवाफ़िक़ रहती है, और उसी मुवाफ़िक़ उनको फल मिलता है। यह लोग हुज्जत और तकरार और लड़ाई और झगड़े और बाद बिवाद करने को हमेशा तइयार रहते हैं, और अपनी टेक और पक्ष उस वक़्त बहुत ज़ोर और शोर से ज़ाहर करते हैं पर सच्चे प्रेमी उनको नादान

और जाहिल और अहंकारी समझ कर, उनके साथ गुफ़्तगू या चर्चा नहीं करते हैं, मुवाफ़िक़ इस क़ौल के ॥

॥ दोहा ॥

बहते को मत बहन दे गह पकड़ाओ ठौर ।
समझाया समझे नहीं तो कहो बचन दो और॥
बहते को बह जान दे मत पकड़ाओ ठौर ।
समझाया समझे नहीं तो दे धक्के दो और ॥

४४–बड़ा अफ़सोस है कि इन लोगों की समझ और अक़ल बड़ी मोटी है। ज़रा भी ग़ौर करके बात को नहीं बिचारते। ख़ुद अपनी ज़बान से कहते हैं, कि पुराने वक़्तों की चालढाल और ब्यौहार और लोगों के स्वभाव बहुत बदल गये हैं, और दिन २ बदलते जाते हैं, और यह हाल सिर्फ़ अपनी दो तीन पुश्त का कहते हैं, और परमार्थ की निसबत इनके मन और अक़ल में यह बात ज़रा नहीं समाती, कि जो साधन उस वक़्त में जारी थे जिसको हज़ारों वर्ष गुज़र गये, किस तरह हाल के ज़माने के लोगों के लायक़ हो सक्ते हैं, और इस वक़्त के जीव जो कि धन और देह और बल और प्राकर्म वग़ैरा में निहायत निबल और लाचार हैं, किस तरह पुराने साधन और पुरानी चाल में बर्ताव कर सक्ते हैं। यही सबब है कि ज़बान से मनू धर्म शास्त्र

और पातन्जली योग शास्त्र और अनेक पुराने ग्रन्थों को पढ़ा करें और गाया करें, और आप समझें और औरों को समझावें, और इधर उधर हुज्जत और तकरार करने को उनके हवाले और गवाही देवें, लेकिन किसी शास्त्र के मुवाफ़िक़ कार्रवाई ग्रहस्त या परमार्थ की, न इनके बाप दादे और बंसावली गुरू से और पंडित और परोहित से बनी, और न इनसे और न इनकी औलाद से बनसक्ती है, सिर्फ़ ख़ाली बातें बनाते हैं, और अपनी नालियाक़ती और बे ताक़ती पर नहीं शरमाते, और न अफ़्सोस करते हैं। और जो कोई उनको इस समय के लायक़ कार्रवाई ब्यौहार और परमार्थ के साधन की बतावे (जो कि मुवाफ़िक़ हुकम संतों के है और हर एक से बन सक्ती है) उसको नहीं सुनते, और अहंकार करके और पिछले ग्रन्थों की टेक बाँध कर संतों के बानी और बचन का निरादर करते हैं। इन जीवों को अभागी और क़हरी समझना चाहिये ॥

४५—संतों ने अपनी बानी और बचन में वह जुगत प्रघट की है कि पिछले वक़्त के महात्माओं को उसकी ख़बर भी नहीं थी, और इस क़दर उसको आसान कर दिया है, कि लड़का जवान और बूढ़ा और औरत

और मर्द और पढ़ा और अनपढ़, सब उसकी कार्रवाई आसानी से, बग़ैर छोड़ने घरबार और रोज़गार के, करसक्ते हैं, और तत्काल यानी चंद्रोज़ में उसका फल देख सक्ते हैं, यानी अपनी मुक्ती होती हुई, और कुल्ल मालिक के निज धाम की तरफ़ चाल चलती हुई नज़र आवेगी, और उधर से संत सतगुरु और कुल्ल मालिक की दया और रक्षा सूझ पड़ेगी ॥

४६—पिछले वक़्त के महात्माओं ने जो साधन मिसल अष्टांग योग वग़ैरे के जारी किये वह बिरक्तों से दुरुस्त न बनसके, और ग्रहस्तियों की तो मुतलक़ ताक़त नहीं कि उस रास्ते पर क़दम धर सकें, जब तक कि घरबार और रोज़गार न छोड़ें। यह कठिन साधन पिछले वक़्तों में यानी सतजुग से शुरू कलजुग तक सिवाय पंद्रा बीस ऋषीश्वरों और मुनीश्वरों और औतारों के जैसे राम कृष्ण, ब्यास बशिष्ट, याग्यबल्क उद्दालक और सुखदेवजी वग़ैरे के, जिनके नाम उपनिषदों और शास्त्रों और पुरानों वग़ैरे में दर्ज हैं और किसी से नहीं बने। अब किस क़दर तअज्जुब की बात है, कि आजकल के जीव थोड़ीसी बिद्या पढ़कर और अपने मत के हाल से बिल्कुल नावाक़िफ़, पर थोड़ा तर्जुमा मनू धर्मशास्त्र और योगशास्त्र का

अपनी बुद्धी के मुवाफ़िक़ पढ़कर, संतों और उनके प्रेमीजनों से मुक़ाबला और हुज्जत और तकरार करने को मुस्तैद होते हैं, और अपनी दानाई को जो कि महज़ नादानी और जिहालत है, बड़ी मर्दानगी के साथ ज़ाहर करते हैं। इनको अपनी नादानी और ग़फ़लत की ख़बर जब पड़े कि जब कम से कम एक महीना चुप बैठकर संतों की बानी और बचन पक्षपात छोड़कर सुने और समझें, और अपनी ओछी बुद्धी और बिद्या को उसमें दख़ल न देवें। लेकिन अफ़सोस है कि इनका ऐसा भाग नहीं है, इनसे तो वही करनी बन पड़ेगी जो इनको चौरासी में भरमावे॥

(११) ज़ात पांत के टेकी भी वैसे ही मूर्ख और नादान हैं, और अपने परमार्थी नफ़े और नुक़सान से ग़ाफ़िल। यह लोग संतों के दर्शन और सतसंग के फ़ैज और फ़ायदे से हमेशा महरूम[1] रहेंगे॥

४७—सिवाय पुराने वक़्त के परमार्थी टेकवालों के, बाज़े लोग ज़ातपाँत के भी टेकी हैं, चाहे उनका परमार्थ बने या बिगड़े, अपने से कम ज़ात वाले से कभी दीन न होंगे, और परमार्थ की दौलत चाहे कैसी ही भारी और सस्ती और आसानी से मिलती होवे हासिल नहीं करेंगे। लेकिन दुनिया के कामों और धन के लेने के वास्ते, चाहे कोई ज़ात होवे, उसकी

१ अभागी।

खुशामद और ख़िदमत करने को बहुत खुशी से तइयार रहते हैं, जैसे वकील और डाक्टर और हकीम और धनवान और हाकम और उस्ताद और मास्टर और सयाने दिवाने और रंडी मुंडी वग़ैरा, इनकी कभी ज़ात नहीं देखते और पूछते और बग़ैर किसी के कहने के उनकी हाज़िरी और अनेक तरह की ख़िदमत करने को मुस्तैद रहते हैं ॥

४८—जब कोई परमार्थ के हासिल करने के वास्ते अपने से कम ज़ात की तरफ़ रुजू लावे, तो उसके साथ तमाम बिरादरी और कुटम्ब परवार झगड़े और फ़िसाद करने को तइयार होते हैं। लेकिन जब इनमें से कोई अंगरेज़ी सराय में जाकर अंगरेज़ी खाना खावे, या रंडी घर में डाल लेवे, या शराबी कबाबी या तमाशबीन और ज्वारियों का संग करे, तो उस्से कोई कुटम्बी या बिरादरीवाला मुज़ाहिम नहीं होता, और न किसी क़िसम की बाज़ पुर्स करते हैं, बल्कि उलटा उस्से डरते हैं। यह सब काम ख़राब और ख़िलाफ़ मज़हब हैं, मगर उनमें कोई दख़ल नहीं देता, और परमार्थ यानी सच्चे मालिक की पूजा और भक्ती, जो कि सब कामों में बढ़ का काम है, दुनियादारों की नज़र में ऐसा ओछा और फ़ज़ूल दिखलाई देता है, कि उसकी

कार्रवाई करनेवालों की निंद्या करते और तान तंज़ लगाने से नहीं डरते। बल्कि इस क़िसम की उपाधियां उठाने को तइयार होते हैं, कि जिस्से उसकी परमार्थी तरक़्क़ी में ख़लल पड़े, या वह कार्रवाई बंद हो जावे। यह लोग बजाय कार सवाब यानी पुन्य के, अपने ऊपर भारी पाप का भार चढ़ाते हैं, जिसके सबब से उनकी आक़बत कभी नहीं सुधरेगी, यानी उनका परलोक कभी नहीं बनेगा॥

(१२) बाज़े लोगों के ओछे और नाक़िस ख़्याल निसबत औरतों के परदे के, और हारिज होने उनकी तरक्की इल्म[१] और अक़्ल[२] समझ[३] और तजर्बा[४] और सच्चे परमार्थ[५] में।

४६—बहुत से मर्द दुनियादार औरतों को परदे में रखने की कोशिश करते हैं, और उनको सतसंग नहीं करने देते। इन लोगों की अक़्ल और समझ पर बड़ा अफ़्सोस आता है, कि बावजूद इस बात के, कि औरतें आम तौर से किसी बात में मर्दों से कम नहीं हैं, और इल्म और अक़्ल मर्दों के मुवाफ़िक़ हासिल करके, बंदोबस्त घर का और बाहर का अच्छी तरह कर सक्ती हैं और इस क़िसम की कार्रवाई आज कल बहुत जगह जारी है, यानी औरतें डाक्टरी और

१ विद्या। २ बुद्धी।

मुहर्रिरी और वकालत और मास्टरी और तिजारत के काम, और दूकानदारी और मुसव्वरी और ख़बर नवीसी, और बहुत से फ़न और हुनर और नट बिद्या और सिपहगरी के काम कर रही हैं फिर भी यह लोग उन पर जो ज़रा क़दम बढ़ा कर रक्खें, तो रोक टोक लगाने और तान तंज़ करने और बुरा भला कहने में कसर नहीं रखते। लेकिन इनकी इस क़िस्म की कार्रवाई बेफ़ायदा है, क्योंकि अक्सर औरतें अनेक तरह की पूजायें जो ख़िलाफ़ शास्त्र हैं, मिसल सीतला और बराही और जखइया और क़बरों वग़ैरे की करने को बेतकल्लुफ़ बाहर जाती हैं, और मंदरों में उत्सव के दिन दर्शन करती फिरती हैं और तीर्थों में तो यह कैफ़ियत बकसरत नज़र आती है, यानी बराबर मर्द व औरत बे क़ैद और बे तकल्लुफ़ मंदरों का गश्त और परिक्रमा वग़ैरा, और साधों के अखाड़ों में और पंडितों की कथा वग़ैरे में जाती आती हैं। अलावह इसके झुंड के झुंड औरतों के कुछ रात बाक़ी रहे से और दिन चढ़े तक हमेशा, और ख़ास कर परभी के दिन और कार्तिक के महिने में, गंगा और जमुना और २ दरियाओं पर नहाने और पूजा करने को जाती हैं। सिवाय इसके अक्सर औरतें

बिरादरी के अनेक कामों और रसमों और ब्योहारों में घर २ जाती आती हैं, और कोई ख़ास तौर पर परदा नहीं करती हैं।

५०—ज़्यादह तर अफ़्सोस इन लोगों की इस समझ पर आता है, कि औरतों की निसबत गुरू धारन करना नाजायज़ कहते हैं, और बयान करते हैं कि उनका पति ही उनका गुरू और परमेश्वर है। अब ख़्याल करो कि जब पति को गुरू और परमेश्वर क़रार दिया, तो सच्चे मालिक की भक्ती और पूजा से उनको एक दम हटा दिया, और सच्चे गुरू से भी जो मालिक से मिलने का जतन बताते और भक्ती पूजा की बिधी समझाते उनको रोका और हटाया और जो उनके पति संसारी और टेकी पुर्ष हैं, और जो वे सिवाय घर बार के कारोबार और ब्योहार और रोज़गार वग़ैरे और भोग बिलास के कुछ नहीं जानते हैं, तो दोनों निपट संसारी रहे, और अपने पैदा करनेवाले मालिक का कुछ भेद न जाना, और न उसकी कुछ भक्ती करी, तो दोनों का परलोक बिगड़ा और चौरासी में भरमने के अधिकारी हुये। और यही सबब है कि ऐसे दुनियादार मर्द और औरतें वक़्त तकलीफ़ या बीमारी वग़ैरः के, भूत पलीत और भंगी और धोबी

मुर्दों और मुसलमानों के क़बरों की पूजा बे तकल्लुफ़ करने लगती हैं। ऐसी पूजायें जब एक दफ़े शुरू हुईं, तो सालहा साल और नसलन् बाद् नसलन् उनके घराने में जारी रहती हैं। अब इनसे पूछना चाहिये कि यह पूजायें कौन से शास्त्र के मुवाफ़िक़ आप करते हैं, और अपनी औरतों से कराते हैं। सच्च पूंछो तो यह लोग नास्तिक और भ्रष्ट हैं। इनको संतों और महात्माओं और भक्तों और प्रेमियों पर, और उनके सतसंग और भक्ती की कार्रवाई पर तान मारते और निंद्या करते शरम भी नहीं आती। ज़रा गरेबान में सिर डाल कर अपने हाल और चाल को देखें, कि बिलकुल बेमज़हब वालों के मुवाफ़िक़ गुज़रान कर रहे हैं। और जो लोग कि सच्चे मालिक को चीन्ह कर उसकी भक्ती करते हैं, उनकी हंसी उड़ाते हैं, और उनसे परहेज़ करना चाहते हैं। प्रेमीजन तो ख़ुश होते हैं, कि जो यह लोग अपनी मूर्खता से ख़ुद उनसे हटना चाहते हैं तो सहज में इनसे पीछा छूटता है, क्योंकि यह उनके संग और सोहबत के लायक़ बिलकुल नहीं हैं। पर इनका बहुत अकाज होता है। एक तो मालिक से बेमुख और दूसरे संत और भक्तजन के निंदक और बिरोधी। यह लोग मुफ़्त पापों

का भार अपने सिर पर चढ़ाते हैं, जैसा कि गुरू नानक ने इन कड़ियों में कहा है ।

॥ कड़ियां ॥

संत का निंदक महा अतिताई ।
संत का निंदक खिन टिकन न पाई ॥
संत का निंदक महा हत्यारा ।
संत का निंदक परमेश्वर मारा ॥
संत का निंदक राज से हीन ।
संत का निंदक दुखिया और दीन ॥
संत के दूषन मत होय मलीन ।
संत के दूषन शोभा ते हीन ॥
संत के निंदक को सर्व रोग ।
संत के निंदक को सदा विजोग ॥
संत का दोषी जनमे मरे ।
संत की दूखना सुख ते ठरे ॥
संत के दूषन सुख सब जाय ।
संत के दूषन नर्क में पाय ॥

५९—ज़रा ग़ौर करने से इस ना मुनासिब चाल की भारी ग़लती ज़ाहर होती है जब कि किसी इस्त्री का पति थोड़ी या कुछ ज़्यादा उमर में गुज़र गया, तौ गोया उसका गुरू और परमेश्वर मर गया, अब वह

किस का आसरा और सहारा लेकर अपनी ज़िंदगी बसर करे। जो पहिले ही से सच्चे गुरू से उपदेश दिला कर, उसको थोड़े बहुत अंतरी ध्यान वग़ैरा में लगादेते तो इस वक़्त में उसको बहुत मदद मिलती, यानी कुछ परमार्थ का आनन्द पाकर दुनिया के दुक्ख को किसी क़दर बिसरती ॥

५२—देखने में आता है कि लोग बेवह हो जाने पर, औरतों को बंसावली गुरुओं से उपदेश दिलाते हैं, और वे मूर्त पूजा वग़ैरे में लगादेते हैं, लेकिन उसमें कुछ शान्ती या अंतर आनंद नहीं आता। अब ग़ौर करो कि पति को गुरू मान्ने से क्या फ़ायदा हुआ, जब उसके मरने के बाद दूसरा गुरू धारन करना पड़ा, और वह भी असली परमार्थ से बेख़बर ॥

मालिक को कहते हैं कि सब जगह मौजूद है, और जो ऐसा है तो हर एक जीव के घट में भी मौजूद है, और उसकी पूजा घट में वाजिब और सहीह है। फिर जब बंसावली गुरू (पण्डित या भेष या गुसांई या साहब-ज़ादे) ने घट का भेद न बताया, तो वह आप गुरुवाई की रीत और सच्चे मालिक के भेद से बेख़बर हुआ, फिर वह गुरुवाई के लायक़ किस तरह हो सक्ता है, और उसको गुरू धारन करने से मालिक से मेल कैसे

होगा, और भरम कहां दूर हुआ। ख़ुलासा यह कि ऐसी बेचारी औरतें जैसी नादान थीं वैसी ही रहीं, और उनके उद्धार और मालिक के चरनों में मन के लगाव की कोई सूरत न निकली। यह नतीजा उस दस्तूर का हुआ, कि जिसके मुवाफ़िक़ औरतों को गुरू धारन करने से बाज़ रक्खा, और उनके पति को ही उनका गुरू और परमेश्वर क़रार दिया और बंसावली और सच्चे गुरू में तमीज़ और फ़र्क़ न किया, और नक़्ल यानी मूर्त को पेश करके असल का पता और भेद न समझाया, फिर शान्ती कैसे प्राप्त होवे, जैसे हाकिम या हकीम या ख़ाविंद की तसवीर कुछ काम नहीं दे सक्ती, इसी तरह मालिक की तसवीर से भी कुछ काम नहीं निकल सक्ता॥

५३—मुनासिब तो यह है कि कुल्ल औरत और मर्दों को, जब कि अठारा बीस बर्ष की उमर हो जावे, कुल्ल मालिक के भेद से (जो कि घट में मौजूद है) सम-झौती देकर, जुगत उसके ध्यान और पूजा की बताना चाहिये, ताकि वे उसी वक़्त से एक या दो बार दिन रात में थोड़ा बहुत अभ्यास करें, और जैसी उमर बढ़ती जावे और फ़ुर्सत और मौक़ा मिले, उस अभ्यास को आहिस्ते २ बढ़ाते जावें, और वक़्त ज़रूरत किसी

दूसरे के महुताज न रहें, और हमेशा अपने घट में आसरा और भरोसा अपने सच्चे मालिक का रक्खें, और तकलीफ़ में इधर उधर न भरमें, यानी अपने अंतर में थोड़ी बहुत शान्ती हासिल कर सकें ॥

५४—यह भेद और जुगत संत सतगुरु या उनके प्रेमी जन से, जो संगत में शामिल हैं, मालूम हो सक्ता है। सुहागन औरतों को उनके ख़ाविन्द, अपने साथ सतसंग में ले जाकर, उपदेश दिला सक्ते हैं, और जो बेवा हैं वह अपने मा बाप या भाई या लड़के या सास या सुसर या देवर जेठ या कोई ख़ास रिश्तेदार के संग संगत में जाकर और उपदेश लेकर, अपने घर में बैठ कर अभ्यास कर सक्ती हैं, और जब तब मौक़े मुनासिब पर सतसंग में भी शामिल होवें, इसमें परदा भी रहा आवैगा, और सब तरह से हिफ़ाजत भी इनकी रहेगी यानी सतसंग में अकेली नहीं जावेंगी ॥

(१) सबब ऐसी समझ बूझ और बर्ताव का यह है कि यह मर्द आपही परमार्थ से बेख़बर हैं, यानी न तो सच्चे मालिक के भेद से वाकिफ़ हैं, और न कुछ उसकी भक्ती या अंतरी पूजा करते हैं, फिर उनके मन में परमार्थ की क़दर और ज़रूरत, वास्ते हर एक जीव के कैसे समावे, और बर्ताव और ब्यौहार उनका

कैसे बदले। इस वास्ते वे आप भी निपट संसारी हैं, और नक़ली परमार्थ और देवताओं और भूत प्रेत की पूजा में राज़ी, फिर उनके इस्त्री और बाल बच्चे भी, उन्हीं के मुवाफ़िक़ नादान और सच्चे परमार्थ से बेख़बर और बेपरवाह बने रहते हैं। और जिस किसी के सच्चा दर्द परमार्थ का पैदा होता है, उसकी कार्रवाई देख करके ऐसे पुर्ष और इस्त्रियों को अचरज मालूम होता है और अपनी मूर्खता से उस पर तान मारते हैं, और हंसी उड़ाते हैं। और अपनी ग़फ़लत और बेपरवाही का सोच बिचार नहीं करते, और न मरने के वक़्त की सख़्त तकलीफ़ का ख़ौफ़ दिल में लाते हैं॥

(२) जो उनको सच्चे परमार्थ का उपदेश मिलता तो अपने कुल कुटम्ब और रिश्तेदार और पड़ोसी वग़ैरे को समझा कर, उसी कार्रवाई में लगाते, और अपने और उनके भागों को सराहते, और मालिक की दया का शुकराना बजा लाते॥

(१३) एक गुरू करके दूसरा गुरू न करने के बयान में।

५५—बाज़े मर्द और औरतों का यह ख़्याल है, कि एक गुरू करके दूसरा गुरू न करना चाहिये, सो यह बात उस हालत में दुरुस्त है जब कि सच्चे और पूरे

गुरू पहिलेही मिल जावें, और जो किसी ने बंसावली या मामूली गुरू कर लिया है, और उसने सच्चे मालिक का भेद और जुगत उसके मिलने की घट में नहीं समझाई, और उलटा नकल यानी मूर्त और तीर्थ में भरमा दिया, तो उसका नाम गुरू नहीं हो सक्ता। बल्कि वह पाखंडी और धोखा देने वाला है, और आप भी धोखा खाया हुआ है, फिर ऐसे गुरू को छोड़ने में जिस वक़्त कि सच्चे गुरू मिलें हरगिज़ देर नहीं करनी चाहिये ॥

॥ साखी ॥

झूंठे गुरु की टेक को तजत न कीजै बार।
द्वार न पावे शब्द का भटके बारम्बार ॥
सुरत शब्द बिन जो गुरु होई। ताको छोड़ो पाप कटा ॥

५६—सच्चे गुरू की पहिचान यह है कि घट में कुल्ल मालिक और रचना का भेद बतावें, और शब्द सुनाकर अंतर में सुरत यानी रूह और मन को सिमटवावें और चढ़ावें और आंख के मुक़ाम से, जहां जाग्रत अवस्था में जीव की मुख्य कर बैठक है, चलने की तरकीब समझावें और आप कुल्ल मालिक के अस्थान से बाख़बर आये होवें, या अपना काम यहीं अभ्यास करके पूरा कर चुके होवें, या साधना कर रहे होवें।

पहिले का नाम संत सतगुरु और दूसरे का साध गुरू या प्रेमी अभ्यासी है। उनके उपदेश और सतसंग से जीव का कारज बन सक्ता है, और कोई दूसरी जुगत से सच्चा उद्धार मुमकिन नहीं है, और चौरासी का भरमना नहीं छूटेगा ॥

५७—अब जीवों को आप बिचारना चाहिये, कि सच्चे मालिक और असल से मिलने की सच्ची जुगत बतानेवाले, और रास्ता चलानेवाला ही गुरू हो सक्ता है, या कि नक़ल और भरमों में और बाहर मुखी करमों में भटकाने वाला और असल से बेमुख रखने वाला। वह तो आप ही बेख़बर है और भरमों में भरम रहा है, और धन और पूजा के लालच औरों को भी भरमाता है। ऐसे झूठे आदमी से जिसने पाखंड करके या नादानी से अपना नाम गुरू रक्खा है, रिश्ता गुरु-वाई का तोड़ना मुनासिब है या नहीं। इस में कभी पाप नहीं होगा, बल्कि कुल्ल मालिक राज़ी और ख़ुश होगा। उन जीवों का जिन्होंने सच्चा उपदेश लेकर अभ्यास शुरू किया है, और सच्चे गुरू और सच्चे मालिक की सरन में आये हैं, अपनी मेहर से आप उद्धार करेगा, और रास्ता तै करने में मदद देगा। इस बात की सचौटी का हाल थोड़े दिन के अभ्यास से जीव को मालूम हो सक्ता है ॥

(१४) क़ायदा बर्ताव का सतसंग में और पूरे गुरू के साथ।

५८—जो कि बग़ैर पूरे गुरू और उनके सतसंग के किसी जीव का सच्चा उद्धार मुमकिन नहीं है, इस वास्ते कहा जाता है कि परमार्थियों को किस तौर से वहां बर्तना चाहिये, जिस्से उनको पूरा फ़ायदा हासिल होवे ॥

५९—परमार्थी जीवों को पहिले खोज सतगुरु और उनके सतसंग का लगाना चाहिये। और जब पता मिल जावे, तब जिस क़दर जल्दी बन सके सतसंग में शामिल होवें। और जब वहां जावें तब वहां के क़ायदे के बमूजब आदाब बजा लाना चाहिये, यानी दृष्टी सतगुरु के सनमुख करके चरनों पर मत्था टेकना या चरन छूकर बंदगी करना चाहिये। और जहाँ तक मुमकिन होवे सन्मुख, या दायें बायें, जहाँ सतगुरु की नज़र पड़ती होवे बैठना चाहिये—पीठ पीछे या नज़र के पीछे की तरफ़, जहां तक मुमकिन होवे न बैठे। क्योंकि वहाँ नज़र दया की भरी हुई उस पर नहीं पड़ेगी, और बचन भी जैसा सनमुख होने से सुनाई देंगे, नज़र से पीछे की तरफ़ बैठने से वैसे साफ़ नहीं मालूम होंगे, और नज़र भी किसी क़दर चंचल रहेगी ॥

६०—जब सतसंग में जावे, तब अपने तईं ख़ाली

और कम वाक़िफ़ कार समझ कर, दीनता के साथ जावे तब कुछ फ़ायदा उठावेगा। और जो अपने तईं भरपूर और दाना समझ कर, या मुमतहिन बन कर या सैर देखने की नज़र से जावेगा, तो वह ख़ाली आवेगा और शायद बजाय दया के, उनकी ना मेहर-बानी की नज़र उस पर पड़े, और अकाज होवे ॥

६१—जब सतसंग में बैठे तब नज़र सतगुरु पर रक्खे और बचन चित्त देकर सुने और समझे, और कोई ख़्याल दुनिया यानी घरबार या रोज़गार वग़ैरे का मन में न लावे, नहीं तो बचन कम सुनाई और समझाई देगा, और उसका रस भी नहीं मिलेगा। और जिस वक़्त कि सतगुरु बचन कहते होवें, बीच में सवाल न करे—और जब वे फ़िक़रा या बचन पूरा करलें तब जो कि दरियाफ़्त करना होवे पूछे और हो-शियारी रक्खे कि सिवाय असली मतलब की बात के या जो कुछ कि उस्से तअल्लुक़ रखता होवे, दूसरी बात न पूंछे और न कहे, नहीं तो मतलब ख़ब्त हो जावेगा। और जो बात कि सुने उसका बिस्तार और फैलाव अपने मन में आप करे ॥

६२—जब सतसंग में बचन ऐसे होवें कि किसी नाक़िस चीज़ के खाने पीने या ख़्याल करने या नाक़िस

करतूत के करने से परहेज़ करना चाहिये, तो अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ उसके मान्ने में अंतर और बाहर कोशिश करे। और जो बातें नई सुनाई देवें, उनको जहां तक मुमकिन होवे याद करे, और बाद सतसंग के उसका मनन करके हिरदे में बसाता जावे ॥

६३—फ़ज़ूल और बेमतलब की बातचीत न करे, और दुनिया की ख़बरें सतसंग में न सुनावे, और न दुनिया के बड़े आदमी और अमीरों और राजाओं की कथा कहे, और न उनके ब्यौहार और चाल चलन की बातों का ज़िक्र करे, और न कचहरी दरबार के मुआमलों और मुक़द्दमों और लड़ाई झगड़ों का ज़िक्र करे, और अपनी बिरादरी और रिश्तेदारों के ब्यौहार और उनके घरों की और शहर की चीज़ों का बर्णन न करे, क्योंकि यह सब कारख़ाने मलीन हैं, और परमार्थ से उनका कुछ तअल्लुक़ नहीं है ॥

६४—सतसंग में बैठकर मन को दुनियावी ख़्यालों और ज़िकरों से ख़ाली करना चाहिये, न कि नई २ चीज़ों और मतलब से ख़ारिज बातों का उस में भराव करना और औरों के मन को भी गदला करना ॥

६५—सतसंग में किसी की बुराई भलाई करना नहीं चाहिये, और किसी के मुआमलों या कारवाई पर ख़्वाह

दुनिया या राजदरबार के मुतअल्लिक़ होवे हर्फ़गीरी[1] या अपनी रायज़नी[2] करना मुनासिब नहीं है, क्योंकि सतसंग परमार्थ का घर है, न कि दुनिया के झगड़े रगड़े की कथा या मुआमलों के फ़ैसले करने की जगह। इस क़िस्म की बातें, बाद परमार्थी कथा के, जहां कहीं कि होती हैं, वह परमार्थ के अमोल और हितकारी बचनों को भुलाने वाली हैं—ऐसे संग और सुहबत में परमार्थी को कभी शामिल होना नहीं चाहिये ॥

६६—जो कोई कहे कि विद्या और बुद्धी और चतुराई की बातें करने में कुछ मुज़ायक़ा नहीं है, इस में अक़्ल और इल्म बढ़ते हैं, तो उसको समझाया जाता है, कि सच्चे सतसंग में विद्या और बुद्धी भुलाई जाती हैं, न कि उनकी याद दिलाई जावे, और तरक़्क़ी की तदबीर की जावे। ऐसी कार्रवाई परमार्थी बचनों के मनन, और अंतर में भजन और अभ्यास की तरक़्क़ी के वास्ते, निहायत दरजे की बिघन कारक और ख़लल डालने वाली है और सच्चे परमार्थी को उस्से सख़्त परहेज़ करना चाहिये ॥

६७—सतगुरु और उनके प्रेमीजन को यह सब बातें निहायत नापसंद हैं, और ऐसे लोगों का जो स्वभाविक

१ कसर देखना। २ अक़्ल लड़ाना

ऐसी बातों में बर्त्तते हैं, सतसंग में शामिल होना मंज़ूर नहीं करते ॥

६८—सिवाय इन सब बातों के जिनका ज़िक्र ऊपर हुआ, सतसंग में बैठकर ऊंघना या सोवना परमार्थ की तरक़्क़ी में निहायत दरजे का ख़लल डालता है, और वहां के क़ायदे और अदब के बरख़िलाफ़ है। लेकिन ऐसे लोग जो गहरा सतसंग कर चुके हैं, वह अपने मन और सुरत को समेट कर बैठें, या एक गोशे पर अलहदा लेट रहें, तो उनकी हालत मामूली ऊंघने और सोवनेवालों से जुदा है। वे ग़ाफ़िल नहीं होते, और न उन पर तमोगुन का ग़ल्बा होता है। वे अपने मन और सुरत को समेटे हुये, अंतर में एक क़िस्म का रस लेते हैं, और नई ताक़त हासिल करते हैं। कभी २ ज़्यादह खिंच जाते हैं; नहीं तो थोड़ी तवज्जह उनकी सतसंग की कार्रवाई या अपनी सेवा की तरफ़ रही आती है। बाज़े लोग जो पहिले दुरुस्ती के साथ अर्से तक सतसंग कर चुके हैं वह वक़्त सतसंग के अपने अंतरी अभ्यास (जैसे ध्यान वग़ैरा) में मशग़ूल हो जाते हैं। जाहर में बैठे २ सोते हुये नज़र आते हैं लेकिन असल में वे होशियार हैं और अंतर में रस ले रहे हैं या चरनों में लै हो रहे हैं। और मालूम होवे कि मन और सुरत को

समेट कर, और ऊंचे अस्थान पर बिठलाकर, बचन या शब्द सुन्ने और दर्शन करने का रस और मजा बनिसबत मामूली तौर से बैठने के ज़्यादा मिलता है। मगर यह हालत गहरे सतसंगी और अभ्यासियों की है। नये परमार्थियों को होशियारी से बैठना, और आंखें खोले हुए दर्शन करना, और बचन चित्त से सुन्ना और फिर उनका मनन करना लाज़िम और ज़रूरी है। और जो इस तरह कार्रवाई नहीं करेंगे, तो गहरे सतसंगियों के दरजे तक नहीं पहुंचेंगे बल्कि सच्चे खोजी और दर्दी का निशान यही है, कि सतसंग में बहुत होशयार बैठे, और किसी बचन का एक लफ़्ज़ भी न जाने देवे, यानी कुल्ल बचन को ग़ौर से सुने और समझे, और फिर उसका मनन करे ॥

(१५) आरती का क़ायदा और फ़ायदा

६६—वक़्त सतसंग के एक तरीक़ा आरती का जारी है। उस वक़्त प्रेम के शब्दों का बानी में से पाठ किया जाता है, और जो शख़्स आरती करना चाहता है वह सन्मुख बैठता है, और सतगुर की दृष्टी से अपनी दृष्टी जोड़ कर, और मन को समेट कर शब्द के मज़मून पर नज़र रखता है, और पहिले या दूसरे मुक़ाम पर अपनी सुरत को ठहराता है। यह तरीक़ा

असल में ध्यान का है। लेकिन तनहाई में मन ऐसा नहीं लगता, जैसा कि सतगुर के सन्मुख, यानी उस वक़्त दुनियावी ख़ियालात नहीं उठते हैं, और सतगुर की नज़र के आसरे से रस और आनन्द विशेष हासिल होता है। अकसर दस पांच या ज़्यादा सतसंगी इस तरह पर आरती करते हैं, और सब सन्मुख बैठते हैं, और हर एक के वास्ते एक या दो शब्द का जुदागाना पाठ किया जाता है, और जब तक कि कुल्ल आरतियां ख़तम होवें, सब सतसंगी इसी तरह दृष्ट अपनी सतगुर के स्वरूप पर जमाकर, और मन को समेटे हुये, बैठे रहते हैं, और अंतर में रस और आनन्द लेते हैं ॥

७०—बाद ख़तम होने आरतियों के, हर एक सतसंगी आरती करने वाला, अपनी सरधा और ताक़त के मुवाफ़िक़, भेंट पेश करता है, और एक या दो या सब आरती करने वाले मिलकर शीरीनी वग़ैरा बतौर परशाद के मंगवाते हैं, कि वह आरती के ख़तम होने पर, कुल्ल सतसंगी और हाज़िरान सतसंग में बराबर तक़सीम हो जाता है। और शुरू आरती में हार चढ़ाते हैं, सो परशादी होकर सतगुर से वापिस मिल जाता है। और बाद देने भेंट और वापस लेने हार के,

मत्था टेक कर और दृष्टी जोड़ कर बंदगी करते हैं ॥

(१६) हार चढ़ाने का फ़ायदा

७१—जो कि संत सतगुर या साध गुरू की सुरत ऊंचे देश की बासी है, और जब नीचे उतरी तौभी पिंड में ऊंचे मुक़ाम पर उसकी बैठक रहती है, इस सबब से उनकी देह से जो रूहानी धारें निकलती हैं, वह भी ऊंचे मुक़ाम की और निहायत निर्मल और सीतल होती हैं। और फूल निहायत नाज़ुक और लतीफ़ होता है, और चाहे किसी क़िस्म की धार हो, उसका असर उस पर बहुत जल्द पैदा होता है। सो जब कि हार बना कर संत सतगुर या साध गुरू के गले में डाला गया, तब उनकी देह और हाथों के स्पर्श से उस में बहुत असर उनकी रूहानी धार का आजाता है, और पहिन्नेवाले के बदन में वह असर प्रवेश करता है, यानी संतों की रूहानी धार, हार पहिन्ने वाले की रूहानी धार से मिलकर, नया असर पैदा करती है, और निर्मलता और सीतलता को बढ़ाती है, यानी ऊंचे मुक़ाम की तरफ़ उसका मुख मोड़ती है ॥

(१७) मत्था टेकने और बंदगी करने का फ़ायदा

७२—ज़ाहिर है कि आंखें झरोखे दर्शन हैं, क्योंकि

हर एक शख़्स की बैठक उनके अंतर में है, और वहीं से वह जगत और उसकी रचना को देखता है- जैसा जिसका मन वैसी उसकी नज़र होती है। संत सतगुर और साध गुरू ऊंचे देश के बासी और महा निर्मल और महा सीतल और दयाल हैं, और उन की नज़र भी दयालता और सीतलता और मेहर से भरी हुई है, और जिस पर वह नज़र तवज्जह के साथ पड़ती है, उसके दिल पर भी वही असर किसी क़द्र पैदा करती है। इस वास्ते उनकी नज़र के साथ नज़र मिलाकर बंदगी करने में बहुत फ़ायदा होता है, यानी उनकी दया और मेहर हासिल होती है। और जो कि उनकी देही और ख़ास कर हाथों और चरनों से हर वक़्त महा पवित्र रूहानी धारें निकलती रहती है, इस वास्ते उनके चरनों पर मत्था टेंकने से, गहरा असर रूहानियत का बन्दगी करने में आता है, और प्रीत पैदा करता है ॥

७३—दुनिया में भी दस्तूर है, कि जो कोई जिस से मिलता है—और ख़ास कर अपने से बड़े के साथ— तब नज़र के रूबरू होकर बंदगी या प्रणाम करता है। अगर सन्मुख यानी नज़र के सामने न हुआ तो बंदगी दुरुस्त न हुई। और जब कुछ ख़्वाहिश या

दरख़्वास्त पेश करता है, तो नज़र मेहरबानी की मांगता है, और जब अपने बराबर या छोटे से मिलता है, तब मुहब्बत और प्यार की नज़र से उस को देखता है। और हर कोई मर्द या औरत या बालक नज़र को पहिचानते हैं, यानी नज़र से हाल मन की मुहब्बत और दोस्ती या दुश्मनी और बर-ख़िलाफ़ी का दरियाफ़्त करके, उसी मुवाफ़िक़ आपस में बर्ताव करते हैं ॥

७४—आपस में मिलने के वक़्त एक दूसरे के बदन को स्पर्श करने का भी दस्तूर आम है, और यह निशान अदब और दोस्ती और मुहब्बत का समझा जाता है। जैसे कोई (जहां मुहब्बत ज़्यादा है) बग़लगीर होकर मिलते हैं, यानी सीने से सीना मिलाते हैं, या हाथ से हाथ मिलाते हैं, या जहां बड़ाई छुटाई का हिसाब है, घोटे या पांव छूते हैं, या चरन चूमते हैं। इस कार्रवाई से दोनों की रूहानी धारें आपस में मिलती हैं, और एक का असर दूसरे में प्रवेश करता है। बालकों को जिनके रूह और मन निर्मल होते हैं, हर कोई ज़ियादती प्यार से गोद में लेकर चिपटाता है और चूमता है ॥

———

(१८) परशादी और चरनामृत का फ़ायदा

७५—ऊपर लिखा गया कि सतसंग में शीरीनी वग़ैरे की क़िस्म से परशाद बंटता है; यह परशाद या तो पहिले ही परशादी होकर बांटा जाता है, या बाद तकसीम के जिस २ के दिल में आता है, वह अपने हिस्से को परशादी कराकर खाता है ॥

परशादी से यह मतलब है, कि सतगुर या साध गुरू उसको अपनी ज़बान से छू दें, या लब लगाकर पवित्र कर दें। जब तक किसी के मन में सच्चा भाव और प्यार सतगुर का न होगा, तब तक परशादी नहीं खाई जावेगी। और भाव और प्यार उस वक़्त आता है, जब कि कुछ पहिचान आती है और दया का परचा मिलता है—बग़ैर ऐसी महिमा जानने के कोई परशादी नहीं ले सक्ता ॥

७६—आम तौर पर हर एक के लब में चाहे मनुष्य होवे या जानवर ख़ास असर है। देखो मनुष्य अपने लब से फोड़े फुंसी और दाद और ज़ख़्म वग़ैरा को अच्छा कर लेते हैं, और कुत्ता अपने लब से अपने ज़ख़्म को चंगा कर लेता है, और गाय भैंस बल्कि कुल्ल जानवर अपने बच्चों को चाट २ कर ताक़त देते हैं। फिर जब कि आम मनुष्य और जानवरों के लब में

इस क़दर असर अमृत का है, तो संत सतगुर और साध गुरू के लब में, जिन की धार अमृत के भंडार से और ऊंचे मुक़ाम से आती है, किस क़दर असर अमृत का होना चाहिये। वही लब यानी अमृत की धार हर एक के ज़बान पर सर्ब रस और स्वाद् और सीतलता का भंडार है। बुख़ार या और बीमारी में जब कि उस धार की आमद् में कमी हो जाती है, और नाक़िस मवाद् का असर बढ़ जाता है, तब किसी क़द्र ज़बान का मज़ा कड़ुवा और फीका हो जाता है। इस वास्ते जो कोई निर्मल अमी का रस लेना चाहे, वह संत सतगुर की परशादी से हासिल हो सक्ता है। और ख़्याल करो कि जब एक के लब से जो बीमार है दूसरे आदमी के मुंह और बदन में बीमारी का असर फ़ौरन पैदा हो जाता है, फिर अमृत और निर्मलता और सीतलता का भी असर संत सतगुर के लब से ज़रूर पैदा होगा। इस वास्ते वही बड़ भागी हैं जिनको नित्त संत सतगुर की प्रशादी, जो अमीं यानी निर्मल रूहानी धार से भरी हुई है, खाने को मिलती है, और जो उस से परहेज़ करते हैं, वह अजान हैं और उनको अभागी समझना चाहिये॥

७७—दुनिया के लोग निपट नादान हैं, और ज़रा ग़ौर और बिचार को काम में नहीं लाते हैं, नहीं तो संत सतगुर और साध गुरू की परशादी लेनेवालों पर तान न मारते। क्योंकि देखो आप कितने जानवरों की परशादी रोज़मर्रा खा रहे हैं, (१) चिड़िया मोरी में से कीड़े बीनती हुई उसी चोच से चौके में से रोटी का आटा नोच कर ले जाती हैं, (२) और इसी तरह से चूहे और चुहियां मोरी में से निकलकर, और चौके में जाकर, आटा या रोटी खींच ले जाती हैं, (३) बिल्ली और कउवे भी पानी और खाने की चीज़ में मुंह डाल देते हैं, (४) और हलवाई की दूकानों में बिल्ली और चूहे थोड़ा और बहुत सब ही मिठाई को झूंठा कर देते हैं, (५) गांड़े का रस जहां निकाला जाता है उसको हर कोई झूंठा कर देता है, (६) और नाज जब बालों में से निकाला जाता है, तो आदमी और बैल उसको पैरों से खूंदते हैं, और बैल उसमें पेशाब भी कर देते हैं, (७) अफ़यून को हरएक ज़ात के मर्द और औरत अपना थूंक लगाकर दरख़्त से उतारते हैं, (८) घी भंगी और चमारों तक के घर से आता है, (९) और गंडेरियां तरकारी और सिंघाड़े वग़ैरा कुंजड़ों (मुसलमान) के पानी से, जो एक नंदोले में भरा

रहता है (और उसमें वे और उनके लड़केबाले हाथ धोते हैं) छिड़के जाते हैं, (१०) बनियें बेचने के वक़्त मुसल्मानों के बर्तन में घी तौलते हैं, और जब तौल से ज़्यादा भर जाता है, तब उस में से निकाल कर अपने बरतन में डाल लेते हैं, (११) हलवाई जब चमार और भंगी के हाथ पूरी और मिठाई बेचते हैं, तब उनके हाथ से रुपये और पैसे लेते जाते हैं, और माल तौल कर देते जाते हैं, (१२) बहुत से लोग जो तमाश-बीनी करते हैं, रंडियों के मुंह से मुंह और ज़बान से ज़बान मिलाते हैं, और जब उनके यहाँ रात भर रहते हैं, तो वहीं खानपान भी करते हैं, इनकी कौन ज़ात है, ज़ाहर में मुसल्मान वरनह असल में कोई ज़ात नहीं है, (१३) नई रोशनीवाले जवान लड़के हर एक कौम के, डाक बंगले और होटल और अंगरेज़ी सराय और स्टेशन के अंगरेज़ी खाने के कमरे में जाकर, बराबर शराब और कबाब और खाना मुसलमानों का पकाया हुआ खाते हैं, (१४) आटा जो कोलन और चमारियां पीसती हैं, गरमियों में उनका पसीना व कसरत उसमें गिरता जाता है, और उनके पैरों से खुंदता है, और वहीं वे अपनी रोटियों के टुकड़े भी खाती जाती हैं, (१५) भड़भूंजे हिन्दू और मुसलमान जब खीलें और चना

भूनते हैं तब अपनी हांड़ियों के पानी से उन्हें भिगोते हैं और उबालते हैं, (१६) और गड़रिया और कहार और कहारियां सुबह उठकर और पाखाने होकर जो कि हाथ भी अच्छी तरह से नहीं धोते, बड़ी जातवालों के घरों में से मटके और कलसे दरिया या नल पर ले जाते हैं और भर कर लाते हैं—दरिया का पानी सर्ब ज़ात का धोवन और चरनामृत है, क्योंकि हर कोई उसमें नहाता है और कपड़े धोता है, और ताअ-ज्जुब यह कि उस मटके या कलसे को ख़ाविंद या बेटे या भाई जो अपनी अंस हैं, और रोज़ नहाते हैं और सफ़ाई रखते हैं, अगर छू लेवें तो वह नापाक समझ कर उतार दिये जावें, और उनका पानी फेंक दिया जावे, (१७) रूई से बने हुये कपड़े को जैसे धोती व कुर्ता और पगड़ी और टोपी वग़ैरा को नापाक समझते हैं और बाज़े चौके वग़ैरे में नहीं पहिनते, और ऊनी कपड़ा जो भेड़ बकरी के बालों से बुना गया है, या रेशमी कपड़ा जो कीड़ों की हगार से तइयार हुआ है, उसको शुद्ध समझ कर चौके में पहिनते हैं, (१८) शहद जो मक्खियों का हगार और उगलन और थूक है, उसको पवित्र समझ कर सर्ब ज़ात खाते और पीते हैं, (१९) चिड़ियां कउवे और तोते वग़ैरा अनेक

फलों को कुतर जाते हैं, और लोग बिला तकल्लुफ़ उनको खाते हैं, (२०) अंगरेज़ी दवाइयां जैसे अर्क़ वग़ैरा भिश्ती के पानी में, मुसलमान और छोटी क़ौमवाले तइयार करते हैं, और हर कोई उनको बीमारी में पीता है, (२१) अक्सर लोग अपनी बिरादरी के साथ एक ही हुक्का पीते हैं, इस्से ज़्यादह और झूंठन क्या होगी, यानी एक दूसरे का थूक चाटता है, (२२) अक्सर क़ौमों में बिरादरी के लोग शरबत या शराब या पानी एकही कटोरे या पियाले में पीते हैं, इस तरह सब आपस में एक दूसरे का झूंठा पीते हैं, बिला ख़्याल इस बात के कि हर एक की रहनी और करम किस क़िस्म के हैं, और कहां और किस के साथ क्या २ चीज़ खाता पीता है ॥

७८—अब इन साहबों से पूछना चाहिये, कि ज़रा ग़ौर करके जवाब दो, कि आप किस २ की झूंठन और छुई हुई चीजें हर रोज खा रहे हो, और संत सतगुरु और भक्त जनसे इस क़दर परहेज़ करते हो, और प्रेमीजन पर जो अपनी बड़ भागता से उनकी परशादी ले रहे हैं, क्या मुंह लेकर तान मारते हो। यही सबब है कि पिछले वक़्त में जब महात्माओं ने देखा, कि तमाम दुनियादार हैवानों यानी पशुओं के मुवा-

फ़िक्र रहते हैं, और संत साध और भक्त जन की ज़रा भी महिमा या अदब और आदर नहीं करते बल्कि उनको अपने बराबर या अपने से और कमतर यानी ओछा मनुष्य देखते हैं, और कुल्ल मालिक के भेद से बेख़बर रहते हैं, और उसके जान्ने की चाह भी नहीं रखते हैं, तब उन्हों ने मुनासिब समझ कर हुक्म दिया, कि इन लोगों का गुरू और महात्मा भी पशू होना चाहिये ॥

७६—सब पशुओं में जब ग़ौर से देखा तो गाय को उत्तम पाया, कि अपनी ज़िंदगी में घास और भूसा खाती है और दूध और घी देती है, और अपने पालनेवाले को खिलाती है, और बाद मरने के भी उसके शरीर से उपकार जारी रहता है, यानी उसकी खाल का चरसा बनाकर बाग़ और खेती को पानी देते हैं, कि जिस्से मेवा और नाज पैदा होता है, जो जीवों का अहार है, और उसकी खाल के जूते बना कर पहिनते हैं, और उसके सींग वग़ैरे भी काम में आते हैं, और आदमी उसकी पूंछ पकड़ कर नदी और नालों के पार जा सक्ते हैं, इस वास्ते गाय को इन मूर्ख दुनियादारों का गुरू और उद्धार करता क़रार दिया। और चूंकि गुरू और महात्मा की परशादी और चरनामृत, वास्ते सफ़ाई मन और इन्द्रियों के

खाते हैं, इस वास्ते पिछले महात्माओं ने हुक्म दिया कि यह दुनियादार लोग गाय का गोबर खावें और बछिया का मूत पियें, तब उनकी सफ़ाई होगी, चुनांचि यह लोग ख़ुशी से साथ ताज़ीम के गाय का गुह और मूत खाते पीते हैं ॥

८०—अब ख़्याल करो कि इस रचना में मनुष्य सब से श्रेष्ट है, और पशुओं का नम्बर दूसरा है, फिर जिन मनुष्यों ने संत और साध और भक्त और महात्माओं को न पहिचान कर और उनकी क़द्र न जानकर, गाय को बड़ा माना और उसका गुह और मूत पवित्र समझा, तो वे पशू से भी द्रजे में कम हुये। क्योंकि देखने में आता है कि गाय मनुष्यों का ग़लीज़ बहुत मज़े से खाती है, और वे गाय का ग़लीज़ पवित्र समझ कर खाते हैं, तो अब उनका क्या द्र्जा ठहरा। और वे संत साध और भक्त जन और महात्माओं के सन्मुख जाने के कहां क़ाबिल रहे, और उनकी प्रशादी कैसे मिले और वे कैसे उनकी क़द्र जानें ॥

(१६) ज़ात का भेद और उसका मुक़र्रर होना करम के बमूजिब ॥

८१—दुनियादार लोग ज़ात पर बहुत ज़ोर देते हैं, ख़ासकर परमार्थ के मुआमले में, पर यह नहीं जानते और न ज़रा बिचार को काम में लाते हैं, कि ज़ात

पांत करम के मुवाफ़िक़ मुक़र्रर हुई, जैसे जो लोग कि मालिक का खोज लगा कर उसकी भक्ती और ध्यान करते थे वह ब्राह्मण कहलाये गये, और जो सिपाही-गरी करते थे वह क्षत्री और जो बनिज ब्यौपार करते थे वह बैश्य यानी बनिये और दूकानदार कहलाये, और जो नौकरी और मिहनत और मज़दूरी करते थे वह शूद्र ॥

८२—अब जो ब्राह्मण रोटी पकाने या किसानी या चपरास गीरी या दूकानदारी वग़ैरा करते हैं और जो काम कि मुतअल्लिक़ उनकी ज़ात के था नहीं करते वे असल में किस तरह ब्राह्मण समझे जा सक्ते हैं। इसी तरह से जिन ज़ात वालों ने अपना काम छोड़ कर दूसरा काम ले लिया, वहभी असल में उस ज़ात में न रहे। क्योंकि जो कोई शख़्स पुरानी चाल के मुवाफ़िक़ ऐसे ज़ात ब्राह्मणों से उनके असली पेशे यानी परमार्थी कार्रवाई का हाल दरियाफ़्त करना या उनसे ब्रह्म विद्या सीखना चाहे तो वह कुछ भी नहीं कह सक्ते। फिर जो कोई टेक धारन करके उन्हीं को अपना गुरू बनावे तो धोखा खावेगा, और उनसे उसको कुछ हासिल न होगा। इसी तरह जो कोई बैद या हकीम के ख़ानदान में से है, या किसी वक़्त के बड़े

हाकिम या राजा के घराने में से है, अब उसने दूसरा पेशा इख़्तियार कर लिया है, और न बैद्क और हकीमी जानता है, और न अमीरी और राज उसके घर में है, तो जो कोई उस्से अपनी बीमारी का इलाज कराना चाहे, या कोई क़ज़िये झगड़े का फ़ैसला चाहे तो वह कुछ भी कार्रवाई बाप दादे के मुवाफ़िक़ नहीं कर सक्ता। जो टेक धारी हठ करके बैद या राजा की औलाद से रुजू लावेगा, उसका काम हरगिज़ नहीं बनेगा, और नुक़सान उठावेगा ॥

८३—मालूम होवे कि ब्राह्मण उसका नाम है कि जो ब्रह्म को जाने, न कि जनेऊ धारी का नाम ब्राह्मण है ॥

श्लोक।

जन्मनजायतेशूद्रः संसकाराद्विजउच्चते।
बेद्पाठीभवेदुबिप्रः ब्रह्मजानातिब्राह्मणः ॥

यानी पैदायश के वक़्त सब ब्राह्मणों की औलाद शूद्र है, और जब जनेऊ धारन करके गुरू की सेवा में लगें तब द्विज, और बेद पढ़ लेवें और उसका पाठ करें तब बिप्र, और जब ब्रह्म को पहिचानें तब ब्राह्मण नाम कहा जाता है। फिर जो ब्राह्मण कि रसमी परमार्थ की कार्रवाई कर रहे हैं, यानी सत्तनारायन

और एकादशी और दसमस्कंध भागवत और रुक्मिनी मंगल और रामायन और दुर्गा वग़ैरा की कथा कह कर अपने कुटम्ब का गुज़ारा कर रहे हैं, या मंदिरों में पुजारी का काम कर रहे हैं, या बीमारों और कामना वालों की तरफ़ से जाप करते हैं, या पत्रा देखकर मुहूर्त्त वग़ैरा बताते हैं और बिवाह कराते हैं, या तीर्थों के मुक़ाम पर पंडे कहलाते हैं, या कंठी बांधकर मामूली नाम या मंत्र कान में फूंक कर जीवों को चेला करते हैं, और हर साल रामत यानी उगाही करने को शहर बशहर चेलों के घरों पर जाते हैं, यह सब और बहुतेरे जो इसी क़िस्म के काम करते हैं, और दान पुन्य और ख़ैरात लेते हैं सब पेशेवाले और रोज़गारी हैं। इनके मन में मालिक का खोज या प्यार या भाव बिल्कुल् नहीं है, और न चाह उसके दर्शनों की या भेद और जुगत के जान्ने की है। ऐसे ब्राह्मणों से एक ज़र्रा सच्चे परमार्थ का किसी को हासिल नहीं हो सक्ता है॥

८४—यही हाल भेषों का है, कि घरबार न मालूम किस आफ़त के वाक़े होने से छोड़ कर, और कपड़े रंग कर शहर बशहर और घर २ मांगते खाते और सैर करते फिरते हैं। और सिवाय बानी और पोथियों

के पाठ कर लेने के, या तीर्थों में भरमने के, एक ज़र्रा भी सच्चे परमार्थ की चाह या खोज या दर्द उनके मन में नहीं है। ज़्यादा कार्रवाई करी तो कुछ संस्कृत सीख ली और श्लोक पढ़ कर लोगों को अपनी महिमां जताने लगे—या बाचक ज्ञान कथकर अपने तईं ब्रह्म मान्ने लगे, और ग्रहस्ती जीवों को बातों से धोखा देकर अपना मतलब बनाते हैं ॥

८५—पिछले वक़्त में लोगों की नज़र करम और रहनी पर थी न कि नकली ज़ात पर। देखो ब्यास जी मच्छोदरी के लड़के थे, और बशिष्ठ जी गनिका से पैदा हुये, और नारद जी दासी के लड़के थे, और सूत पुरानिक जिन्हों ने नीमषार में ऋषियों और मुनीश्वरों को कथा सुनाई दासी के लड़के थे, और कृष्ण महाराज ने ग्वाले के घर में परवरिश पाई, और रामचन्द्र जी क्षत्री थे, और सुखदेव जी जिन्हों ने परीक्षित को भागवत सुनाई ब्यास जी के लड़के थे और बाल्मीक जी बहेलिये थे। अब कहो कि इनमें से कौन ब्राह्मण ज़ात का था, सब अपनी परमार्थी कार्रवाई से इस दरजे को पहुंचे ॥

८६—इसी तरह जितने भक्त हुये उनमें से कोई भी ज़ात ब्राह्मण न था, बल्कि बहुतेरे नीच क़ौम से थे

लेकिन बसबब भक्ती के किस क़दर महिमां उनकी संसार में हो रही है, कि उस वक़्त के राजों और अमीरों और ज़ात ब्राह्मणों को कोई नहीं जानता, पर इनका नाम औरत मर्द और लड़के, जहां २ उनकी मानता है हर रोज़ ताज़ीम के साथ लेते हैं, और गुन गाते हैं, जैसा कि कहा है ॥

जातपांत पूंछे नहि कोई । हरि को भजे सो हरि का होई ॥

८७—परमार्थी कार्रवाई में ज़ात ब्राह्मण और दूसरी ऊंची ज़ात वाले, अपनी नसली ज़ात का बड़ा अहंकार और मान करते हैं, और अपने से कम ज़ात वाले से चाहे कैसाही परमार्थी होवे, और तन मन धन ख़र्च करके, निर्मल भक्ती यानी ख़ालिस परमार्थ की कार्रवाई करता होवे, उस्से परमार्थ का खोज करने या सिक्षा लेने में निहायत दरजे का परहेज़ करते हैं। लेकिन दुनिया के मुआमले में चाहे कोई ज़ात होवे उस्से विद्या और हुनर सीखने में, या उसके नीचे नौकरी करने में, या उसकी तरह बतरह की सेवा और ख़िदमत करने में, ज़रा भी ख़्याल ज़ातपांत का नहीं करते और उसके साथ निहायत दरजे की दीनता और अदब से पेश आते हैं, और उसकी सवारी के साथ बेतकल्लुफ़ दौड़ते हैं। इस्से साफ़ ज़ाहिर है कि इन

लोगों के मन में धन की क़द्र है, और सच्चे परमार्थ और सच्चे मालिक का ज़रा भी आदर और भाव नहीं है, फिर इनका कैसे उद्धार होगा, और क्या परमार्थ इनसे बन आवेगा। इनको सच्चे परमार्थियों पर तान मारते हुये ज़रा भी ख़ौफ़ नहीं आता, और अपनी काहिली और ग़फ़लत और बेजा अहंकार पर ज़रा भी अफ़सोस और पछतावा नहीं करते। सच कहा है कि यह लोग मालिक के दरबार से निकाले हुये, और हटाये हुए हैं, उनको मालिक के चरनों के प्रेम की दौलत, जब तक कि यह सच्चे संत और साध या प्रेमी जनके सनमुख सच्चे मन से दीनता और सेवा नहीं करेंगे हरगिज़ २ नहीं मिल सक्ती है। जो यह लोग दुनिया के मुआमले और रस्मी परमार्थ में ज़ातपात का ब्योहार और बर्ताव जारी रक्खें तो मुज़ायक़ा नहीं, क्योंकि वहां बहुत से काम ज़ाहरी और नक़ली तौर पर किये जाते हैं, लेकिन सच्चे परमार्थ यानी सच्चे मालिक की भक्ती में, ज़ाहरी और नक़ली कार्रवाई कपट में दाख़िल है, और इस सबब से ऐसे लोगों को, जिनकी नज़र ऊपरी और नक़ली कार्रवाई पर है, और असली और अंतरी भेद और भाव से बेख़बर हैं, मालिक के दरबार और संतों और प्रेमियों

के सतसंग में दख़ल नहीं मिल सक्ता, और इस वास्ते सच्चे परमार्थ की दौलत से वह हमेशा बेनसीब रहेंगे ॥

(२०) सेवा का बर्णन ।

८८—सेवा चार क़िस्म की है, तन मन धन और सुरत की। संत सतगुरु या साध गुरू या प्रेमी जन किसी क़िस्म की सेवा के मोहताज नहीं हैं, पर भक्ती की तरक़्क़ी और प्रेम का जागना और मन की सफ़ाई बग़ैर थोड़ी बहुत सेवा के मुमकिन नहीं है ॥

८९—सिवाय इसके सेवा से हाल प्रीत और प्रतीत और शौक़ सेवक का मालूम होता है–यानी जिनके मन में सच्चे मालिक और सच्चे गुरू की और उनके सच्चे उपदेश और सुरत शब्द मारग की महिमां समाई है, और सच्चा प्यार चरनों में आया है, और सच्चा शौक़ भक्ती और शब्द का अभ्यास करके कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के धाम में पहुंचने का मन में पैदा हुआ है, तो ऐसे परमार्थी जीव के हिरदे में उमंग सेवा और ख़िदमत करने की आपही आप पैदा होवेगी, और बग़ैर थोड़ा बहुत तन मन धन और सुरत के लगाने के उस्से रहा नहीं जावेगा ॥

९०–दुनिया में भी जहां जिसकी मुहब्बत है, वहां वह ख़ुशी के साथ तन मन धन ख़र्च करता है, बग़ैर

प्रीत कहीं एक पैसा भी ख़र्च करने को मन नहीं चाहता, फिर परमार्थ में भी जब सच्ची प्रीत होती है, तब इसी तरह उमंग उठती है, और सेवा करके हर्ष होता है और शान्ती आती है ॥

६१—जब तक कि किसी प्रेमी के हिरदे में सतगुरु और सच्चे मालिक की थोड़ी बहुत प्रतीत नहीं आती है, तब तक उस्से तन की सेवा नीचे दरजे की नहीं बन सक्ती है, और न विशेष धन ख़र्च कर सक्ता है, और न उसके मन और सुरत जैसा चाहिये शब्द के अंतर अभ्यास में लग कर थोड़ा बहुत रस और आनन्द पा सक्ते हैं ॥

६२—जितनीं सेवा कि संतों के सतसंग में जारी हैं, वे सब प्रेमी जनों ने आप अपनी उमंग से निकाली हैं, और फिर दूसरे प्रेमीजन देखकर उमंग उठाते हैं, और उन सेवाओं में शामिल होते हैं, और इस कार्र-वाई से अपने अभ्यास में तरक्की पाते हैं ॥

६३—तन की सेवा यह है–जैसे चरन दाबना, पंखा हांकना, हुक्का भरना, जल भरके पिलाना, भोजन तइयार करना, पलंग बिछाना, खाना या प्रशाद तक़सीम करना, पोथी का पाठ करना, शब्द गाना, झाड़ू लगाना और फ़र्श बिछाना वग़ैरा २। यह ज़रूर नहीं है कि हर

कोई यह सेवायें हर रोज़ करे, मगर एक दो या तीन बार हर एक क़िस्म की सेवा को करलेना मुनासिब है, ताकि जब वक़्त आवे और ज़रूरत पड़े तब फ़ौरन् उमंग के साथ उस सेवा को अंजाम देवे और किसी तरह की झिझक या शरम मन में न लावे ॥

६४—फ़ायदा ख़िदमत और सेवा का यह है कि मन में मान और झिझक न रहे, और सफ़ाई और प्यार पैदा होवे, और प्रतीत सतगुरु और कुल्ल मालिक के चरनों में बढ़े, और महिमां उनकी ज़्यादा से ज़्यादा चित्त में समावे, और अंतर अभ्यास में आसानी होवे ॥

६५—मन और बुद्धी की सेवा–सतसंग में बैठ कर बचन सुन्ना और समझना और बिचारना और संसै और भरम दूर करना, और जो २ ख़्याल और भाव संसारियों के संग से मन में बसे हुये हैं, उनको ओछा और बिघन कारक समझ कर निकालना। और सुमिरन और ध्यान एकाग्र चित्त होकर करना, और लीला और बिलास और परचे अंतर और बाहर देखकर मगन होना और प्रतीत बढ़ाना और आरती करके प्रीत जगाना। और अंतर में कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और सतगुरु की महिमां का बिचार और मेहर और दया की परख करके, नई २ भक्ती रीत और सेवा की उमंग अंतर और बाहर उठाना ॥

६६—इन सेवाओं का फ़ायदा यह है कि मन से संसारी ख़्यालों का निकालना, और उसमें प्रेम का भरना, और फिर उसको समेट कर अंतर स्वरूप में जोड़ना और रस लेना, और बाहर सतसंग में दर्शन और बचन का आनंद पाना ॥

६७—धन की सेवा—अगर धन अपने पास मौजूद है तो उसको भूखे प्यासे को देना, और सतगुरु और प्रेमी जनकी सेवा में ख़र्च करना ॥

६८—फ़ायदा—धन में पकड़ और बंधन का घटना, और सतगुरु और प्रेमी जन की प्रसन्नता और दया हासिल करना, और ग़रीबों और मोहताजों की दोआ लेना। यह दया और दोआ प्रेम को बढ़ाती है, और प्रेमी जनकी प्रसन्नता सेवक की उमंग को जगाती है ॥

६६—बाज़े प्रेमीजन सेवा की उमंग में उम्दा २ पोशाक तइयार करके सतगुरु को पहिनाते हैं, और आरती और भंडारा करते हैं। ऐसे उत्सव में सब सतसंगी दर्शन करके मगन होते हैं, और बहुत से उस वक़्त के स्वरूप को मन में बसा कर, ध्यान के वक़्त उस्से मदद लेते हैं। यह दर्शन मन और इंद्रियों के समेटने और जोड़ने में, अंतर और बाहर, ज़्यादा फ़ायदा देते हैं, और इस तरह से जब २ नया दर्शन

नई पोशाक के साथ होता है, तब ध्यान में बहुत मदद मिलती है। सतगुरु शौक़ीन ऐसी पोशाक के नहीं हैं, पर प्रेमियों की ख़ातिर उनको पहिन्ना पड़ता है। क्योंकि इस रीत से उनके मन में नई उमंग और नई प्रीत जागती है, और उनकी भक्ती की तरक़्क़ी होती है, और अंतर अभ्यास में मदद मिलती है। मालूम होवे कि धन की सेवा ख़ासकर ज़रूरी नहीं है, यानी जिसके पास धन नहीं है उस पर यह सेवा फ़र्ज़ नहीं है, वह औरों की सेवा में तन से मदद देवे ॥

१००—मन और सुरत की सेवा यह है, कि सिमट कर घट में शब्द को सुन्ना, और उसके आसरे ऊंचे की तरफ़ को चलना और चढ़ना और रस और आनंद लेना ॥

१०१—फ़ायदा—चरनों में दिन २ प्रीत और प्रतीत का बढ़ना, अभ्यास में तरक़्क़ी का होना, और संसार और उसके पदार्थों और भोगों से आहिस्ते २ मन में उदासीनता पैदा होनी, और परमार्थ की क़दर का दिन २ चित्त में बढ़ना, और उसमें विशेष प्यार का आना, और रहनी का सम्हलना यानी संसारी आदतों का छूटना, और परमार्थी स्वभाओं का बर्ताव जारी होना, और मन और इन्द्रियों का दिन २ तन से,

और सुरत का मन से, न्यारे होना, और अधर में चढ़ना और अंतर शब्द में रचना ॥

१०२—जिन सेवाओं का ज़िकर ऊपर किया गया, उनमें से बाज़ी २ को दुनिया के लोग देखकर अचरज करते हैं, या तान मारते हैं और हंसी उड़ाते हैं। पर यह लोग बेचारे नादान हैं, इनको प्रेम की ज़रा भी ख़बर नहीं है। अलबत्ता दुनिया की मुहब्बत से जिसमें वे अपना तन मन धन लगा रहे हैं ख़ूब वाक़िफ़ हैं, और वहां दिल खोलकर मेहनत और ख़र्च करते हैं कि जिसमें उनके दोस्त आश्ना और रिश्तेदार, और दुनिया के लोग तमाशा देखकर राज़ी होवें और उनकी वाह २ करें। पर यह तारीफ़ चार दिन की है। परमार्थ के रास्ते में और ख़ास कर अख़ीर वक़्त में, यह कार्रवाई कुछ काम नहीं देगी ॥

बरख़िलाफ़ इसके प्रेमी जन को कि जो संसार के भी काम दस्तूर के मुवाफ़िक़ औसत दरजे पर करते हैं, और परमार्थ की क़दर जानकर उसमें भी उमंग के साथ मेहनत और ख़र्च करते हैं, यहां भी लाभ और वहां भी गहरा फ़ायदा मिलता है। वे दुनिया की वाह २ नहीं चाहते, पर संत सतगुरु और प्रेमी जनकी प्रसन्नता दिल और जान से चाहते हैं और उसका

फ़ायदा दुनिया में भी और अख़ीर वक़्त पर और बाद मरने के गहरे से गहरा उठाते हैं, और दुनियादारों की निंद्या और अस्तुति और तान और हंसी का ज़रा भी ख़्याल मन में नहीं लाते। उनके मन में मुख्यता इस बात की रहती है, कि सतगुरु और कुल्ल मालिक राज़ी और प्रसन्न होवें–और संसारियों की चाह दुनिया दारों के रिझाने की रहती है। फिर इन दोनों में बड़ा फ़र्क़ है, और आपस में इनका मेल नहीं हो सक्ता॥

(२१) महिमां सतसंग की।

१०३—राधास्वामी मत में दो क़िस्म की कार्रवाई जारी हैं–बाहर सतसंग और सेवा और अंतर सतसंग और सेवा, यानी सुमिरन और ध्यान और शब्द का श्रवन जिसको भजन कहते हैं॥

१०४—सतसंग में बचन सुनाये जाते हैं, और बानी का पाठ और अर्थ किया जाता है॥

१०५–जो कोई सच्चा शौक़ लेकर सतसंग में शामिल होगा उसके मन और इंद्रियों की गढ़त और सफ़ाई बचन सुन २ और समझ २ कर आहिस्ते आहिस्ते होती जावेगी, और उसकी समझ बूझ भी बदलती जावेगी, यानो संसारी ख़्याल निकस कर परमार्थी ख़्याल मन में धसते और बसते जावेंगे, और दुनिया और

उसके सामान की प्रीत हलकी होती जावेगी, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में प्रेम पैदा होकर दिन २ बढ़ता जावेगा, और स्वभाव और रहना और वर्तावा भी आहिस्ते २ मुवाफ़िक़ भक्तों और प्रेमी जन के होता जावेगा। मन की मलीनता और अस्थूल बिकार बग़ैर सतसंग के कभी दूर नहीं हो सक्ते हैं, और अंतर अभ्यास में भी मदद सतसंग से ही मिलती है।

(२२) महिमां अंतर अभ्यास यानी अंतरी सतसंग की।

१०६—जो कोई बाहर सतसंग करेगा, और उपदेश लेकर अंतर में सुरत शब्द मारग का अभ्यास भी करेगा, तब उसके बंधन संसार के ढीले होते जावेंगे, और अस्थूल और सूक्षम बिकार घटते जावेंगे, और अंतर में रस पाकर शौक़ बढ़ता जावेगा और परचे दया के देखकर चरनों में प्रतीत और प्रीत नई जागेगी, और दिन २ बढ़ती जावेगी, और सरन दृढ़ होती जावेगी, और मन और इंद्रियां और संसार और उसके सामान से, सुरत आहिस्ते २ न्यारी होती जावेगी यानी उसके बंधन ढीले होते जावेंगे, और देह और दुनिया का दुख सुख कम ब्यापेगा, और कोई अर्से के अभ्यास के बाद प्रेमी परमार्थी अपने अंतर में

थोड़ा बहुत हर वक़्त मगन रहेगा, और काल और करम से बेख़ौफ़ होता जावेगा। इस हाल की जांच सतगुरु या प्रेमी जन आप कर सक्ते हैं, या थोड़ी सी इस हालत की ख़बर उन शख़्सों को पड़ सक्ती है जो प्रेमी अभ्यासी का मुद्दत से संग कर रहे हैं, या उसके साथ रहते हैं, जैसे कुटम्बी और नौकर चाकर वग़ैरा—दूसरा शख़्स अच्छी तरह नहीं परख सक्ता ॥

(२३) जीवों का बेजा और ग़लत भरम और खौफ़ निसबत राधास्वामी मत में शामिल होने के।

१०७—आम तौर पर असूल और क़ायदे और भेद राधास्वामी मत का सुनकर थोड़ी बहुत सब को शान्ती होती है, यानी जो बातें दरियाफ़्त करने के लायक़ हैं, उनका जवाब साफ़ २ और थोड़ा बहुत तसल्ली देने वाला मिलता है। पर जीवों की समझ बूझ बहुत ओछी है, इस सबब से वे इस मत की महिमां और बुज़ुर्गी, और सिफ़त उसके अभ्यास की आसानी और फ़ौरन असर दिखानेवाली ताक़त, की, जैसा चाहिये, जान नहीं सक्ते। वजह इसकी यह है, कि पहिले तो उनकी परमार्थी वाक़िफ़कारी बहुत कम, दूसरे कभी कुल्ल मालिक और उसकी क़ुदरत और अपने आपे के मुआमले में खोज और ग़ौर और तहक़ीक़ नहीं किया,

तीसरे सतसंग में नेम से पांच सात दिन बराबर तहक़ीक़ात की नज़र से नहीं आये कि मुफ़स्सिल हाल सुनते और समझते और संसै और भरम अपने दूर कराते, और जिन बातों का इल्म न था उनको दरियाफ़्त करते। जो कभी सतसंग में आये तो एक रोज़ के वास्ते, और फिर महीनों के बाद एक रोज़, और फिर चुपके होके बैठ रहे—यह ढंग तहक़ीक़ात का नहीं है, और इस्से बेपरवाही और कमी शौक़ की ज़ाहिर होती है ॥

१०८—सबब इस बेपरवाही और ग़फ़लत के तीन हैं:-एक तो दुनिया के भोग बिलास में निहायत दरजे का लिप्त और फंसे होना, और ज़्यादा मोह कुटम्ब परवार का और लोभ धन का; दूसरे बेजा ख़ौफ़ इस बात का कि राधास्वामी मत में शामिल होने से उनके भोग बिलास और मोह और लोभ वग़ैरा और दुनिया की चाह और मुहब्बत और गिरफ़्तारी में ख़लल पड़ेगा; तीसरे जगत और बिरादरी की लज्या और शरम और ख़ौफ़ और बंधन कुल की मरजाद और पुरानी रसमों और टेकों में, जिनको छोड़ते वे निहायत डरते और घबराते हैं ॥

१०९—यह तीनों सबब निहायत दरजे की कचाई

परमार्थ की, और वे ख़ौफ़ी दुनिया के दुक्खों और सख़्ती मौत की (जो हर एक के सिर पर खड़ी हुई है) और निहायत दरजे का फंसाव और लिपटाव दुनिया और उसके भोगों में ज़ाहर करते हैं। और यह कसरें सिर्फ़ सतसंग में संतों के बचन और बानी के सुन्ने से दूर हो सक्ती हैं, और कोई जतन या तदबीर उनके हटाने या घटाने की नहीं है ॥

११०—यह लोग अपनी आंख से देखते हैं कि राधास्वामी मत में किसी का कुटम्ब परिवार और घरबार और रोज़गार और ब्यौहार नहीं छुड़ाया जाता है, सिर्फ़ सच्चे कुल्ल मालिक की महिमां सुनाई जाती है, और उस्से मिलने की जुगत समझाई जाती है और दुनिया की नाशमान्ता और दुनियादारों की खुद मतलबी कार्रवाई पर तवज्जह दिलाई जाती है। जो कोई थोड़े शौक़ और तवज्जह के साथ बचन सुनता और समझता है और उपदेश लेकर उस जुगत का अभ्यास करता है, उसको कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का जलवा और प्रकाश किसी क़दर अपने घट में नज़र आता है, और उनकी मेहर और दया की परख आती है, तब वह ज़्यादा शौक़ और मुहब्बत के साथ, सतसंग और अंतर के अभ्यास में लगता है, और फिर

वक़्त अपना दुनियादारों की सोहबत में फ़ज़ूल बरबाद नहीं करता, बल्कि जहां तक मुमकिन होता है, राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर, कुछ ज़्यादा वक़्त परमार्थी कार्रवाई में ख़र्च करता है, और अपना धन भी जिस क़दर बे तकलीफ़ मुमकिन होता है परमार्थ में लगता है। लेकिन ऐसे शख़्स के कुटम्बी और रिश्तेदार और बिरादरी वालों को ऐसी हालत और चाल की बरदाश्त नहीं होती है क्योंकि उन्होंने कभी सच्चे परमार्थ में क़दम नहीं रक्खा, और न कभी सच्चे परमार्थ में पैसा खर्च किया, और न सच्चे मालिक की प्रतीत और प्रीत उनके मन में आई। इस सबब से वे जिस किसी की सच्ची हालत परमार्थ में देखते हैं, तब फ़ौरन चौंकते हैं और ख़ौफ़ करते हैं, कि शायद रफ़्ते २ वह घरबार और कुटम्ब परवार और रोज़गार को छोड़ देगा, और इस ख़ाम ख़्याली के सबब से उसको रोकते हैं और धमकाते हैं, और तरह २ के ख़ौफ़ दिखलाते हैं, और उसकी भक्ती में बिघन डालते हैं॥

१११—जिस किसी ने राधास्वामी मत को अच्छी तरह समझ लिया है, और अभ्यास करके अंतर में कुछ रस पाया है, वह सतसंग का बल लेकर रोज़

मर्रा अपनी पकाई करता है, और मूर्ख कुटम्बी और संसारियों की धमकी और चालबाज़ी को ख़्याल में नहीं लाता, बल्कि उनको भी समझाकर सच्चे परमार्थ में लगाना चाहता है, और जो न लगें तो उनसे ज़्यादा हुज्जत या दलील नहीं करता, और उनको उनके हाल और चाल पर मालिक की मौज बिचार कर छोड़ देता है ॥

११२—अब इन मूर्ख संसारियों की हालत पर ग़ौर करो, कि जो कोई उनके कुटम्ब और बिरादरी में से बुरे से बुरे काम करता है जैसे (१) रंडीबाज़ी करना और उनके घरों पर खाना पीना और ठहरना, (२) जुआ खेलना और खिलवाना, (३) ग़ैर क़ौमों के साथ शराव और कबाब खाना और पीना, (४) और झूंठ बोल कर और फ़रेब कर २ धन पैदा करना, (५) और ग़ैर क़ौम या नीच क़ौम की औरतों को घर में डालना और उनके साथ रहना वग़ैरः, उस्से कोई नहीं कुछ कहता है और न धमकाता है, और न ज़ात में से निकालने का इरादा करता है। लेकिन जो कोई सच्चे परमार्थ में शामिल होकर सच्चे मालिक की सच्ची भक्ती करता है और दिन २ उसकी पुरानी चाल और स्वभाव और रहनी बदलती हुई आंखों से देखते हैं, और

नेक ख़सलतें और नेक ब्यौहार और परमार्थी चाल उसकी परखते हैं, फिर भी अपनी नाक़िस समझ और आदत, और पापों से भरी हुई बुद्धी के साथ, अनेक तरह के अड़ंगे परमार्थी शख़्स की भक्ती में लगाते हैं, और तरह २ के बिघन और ख़लल डालने को (कुल्ल मालिक से निडरता करके) तइयार होते हैं। अब समझो कि इन लोगों को शुभ करम और अच्छी करतूत और सच्चे मालिक की भक्ती प्यारी है कि पाप करम और नाक़िस चाल और बेईमानी पसंद है। फिर समझवार परमार्थी आदमी को, इन लोगों की बातों और धमकियों और निंद्या वग़ैरे का किस क़दर ख़्याल करना चाहिये, यानी मूर्खों और पापियों की समझौती और धमकी वग़ैरे का, अपने सच्चे मालिक की दया का भरोसा रखकर, ज़रा भी ख़्याल और अंदेशा न करना चाहिये, और कुल्ल मालिक की भक्ती हरगिज़ नहीं छोड़नी चाहिये, बल्कि उसको दिन २ मज़बूत करना और बढ़ाना चाहिये-महात्माओं का क़ौल है ॥

गुर राज़ी तौ करता राज़ी।
करम काल की चले न बाज़ी ॥
चु राज़ी शुद अज़् बंदः यज़दान पाक।
गर ईंहा न गरदंद राज़ी चे बाक ॥

यानी जो मालिक अपने भक्त से राज़ी है, तो जो दुनिया के लोग उस्से नाराज़ रहें तो कुछ ख़ौफ़ नहीं है ॥

(२४) दुनिया के लोगों का धरम और ईमान ।

११३–जो लोग कि निपट दुनियादार हैं, उनके मन में मुख्यता धन, इस्त्री, पुत्र और अपनी मान बड़ाई की रहती है–और इस ज़माने का हाल देखकर कहा जाता है, कि इस क़िस्म के लोग कसरत से हैं, और उनके मन में ख़ौफ़ और प्यार सच्चे मालिक का नहीं है, बल्कि बहुतेरों के मन में पूरा २ यक़ीन भी इस बात का नहीं है कि कोई सच्चा और कुल्ल मालिक इस रचना का मौजूद है, फ़िर ख़ौफ़ और प्यार कैसे आवे । यह लोग थोड़ा सा इल्म पढ़कर और नास्तिकों के बानी और बचन सुनकर या पढ़कर, बहुत जल्द उसको क़बूल और मंज़ूर कर लेते हैं, और धोखा खाते हैं ॥

११४—रस्मी परमार्थ जो दुनिया में जारी है, और वह कार्रवाइयां बाहरमुखी जो हर एक मत में कर रहे हैं, वह थोड़े या बहुत पढ़े हुये लोगों को पसन्द नहीं आती हैं, अलबत्ता मूर्ख और नादान और टेकी लोग उनको अपने मन हठ से कर रहे हैं, और इस

में कुछ शक नहीं कि वह परमार्थी क़ायदे और रस्में, आम लोगों के वास्ते किसी पुराने वक़्त में मुक़र्रर हुई थीं, खोजी और दर्दी को वह कार्रवाई शान्ती नहीं दे सकी, और न विद्यावान को उस से तसल्ली हो सकी है। संत मत की इन लोगों को मुतलक़ ख़बर नहीं है, नहीं तो परमार्थ की तरफ़ से ऐसे बेपरवाह, और मालिक की तरफ़ से ऐसे बेख़ौफ़ न हो जाते ॥

११५—सच्चे परमार्थ के हासिल करने के वास्ते दो बातें दरकार हैं :—एक बाहर से चाल और चलन और ब्योहार और बर्ताव का नेक और दुरुस्त होना, दूसरे सच्चे और कुल्ल मालिक का भेद लेकर और उस्से मिलने का जतन दरियाफ़्त करके, अपने घट में नित्त अभ्यास करना, यानी निज धाम की तरफ़ रोज़मर्रा चलना और रास्ता तै करते जाना ॥

११६—जब तक कि बाहर का चाल चलन और ब्योहार दुरुस्त न होगा, और मन में थोड़ी बहुत सफ़ाई नहीं आवेगी, और सच्चे मालिक का थोड़ा प्यार और खोज पैदा न होगा, तब तक अंतर मुख अभ्यास सुरत शब्द जोग का (जिसके सिवाय और कोई जुगत मालिक से मिलने की नहीं है) दुरुस्ती से नहीं बन पड़ेगा ॥

११७—मनकी गढ़त और उसका चाल चलन दुरुस्त करने के वास्ते किसी क़िसम का डर ज़रूर दरकार है, सो इस दुनिया में सात क़िसम के बड़े डर हैं :— पहिला डर हाकम और उसके क़ानून का, दूसरा डर और शरम बिरादरी और रिश्तेदारों और दोस्तों वग़ैरे का, तीसरा डर नुक़सान, अपनी इज़्ज़त और रोज़गार और माल और तनदुरुस्ती का, चौथा डर मौत और कष्ट कलेश का, पांचवां डर पूरे गुरू और सच्चे मालिक का, छठा डर ख़ानदानी इष्ट और पिछले महात्मां और देवता वग़ैरे का, सातवां डर आख़िरत यानी परलोक का ॥

११८—सिवाय इनके कितने ही छोटे डर भी हैं जो मन को दुरुस्ती से चाल चलने में मदद देते हैं—जैसे बालकपन में मा बाप का डर, और फिर उस्ताद का डर, और इस्त्रियों को पति का डर, और नौकरों को अपने २ मालिक का डर, और ख़ानदान की बुज़ुर्गी और नेक नामी का डर वग़ैरे २। क्योंकि वग़ैरे डर के यह मन सीधा नहीं चलता, क्या दुनिया के काम और ब्योहार में और क्या परमार्थ की कारवाई में ॥

११९—पहिला डर हाकिम और उसके क़ानून का सब मानते हैं, दूसरा डर इस वक़्त में ऐसा ज़बर नहीं

माना जाता है जैसा कि पिछले वक़्तों में था, तीसरा डर भी सब मान्ते हैं, चौथा डर मौत वग़ैरे का सब मान्ते हैं मगर भूले रहते हैं यानी उसकी याद बहुत कम आती है, पांचवां डर गुरू और मालिक का किसी बिरले जीवों को होगा जो सच्चे गुरू की भक्ती में लगे हैं, पर आम तौर पर यह डर किसी के दिल में नहीं समाता क्योंकि यक़ीन सच्चे मालिक के हाज़िर और नाज़िर होने का नहीं है या बहुत कम है और वह भी बिसरा हुआ रहता है, छठा ख़ानदानी इष्ट और पिछले महात्मा और देवता वग़ैरे का डर थोड़ा बहुत बाज़े मर्द और बहुत सी औरतें मानती हैं, और उनकी मुक़र्ररह पूजा और भेंट वग़ैरे करती हैं, इस ख़्याल से कि उसके न करने और छोड़ देने में किसी तरह का नुक़सान जान और माल और तन दुरुस्ती वग़ैरे का न हो जावे, इस वास्ते यह डर दुनियावी है परमार्थी नहीं है, सातवां डर आख़िरत और परलोक का अक्सर जीव मानते हैं, हरचंद वे करमी और टेकी हैं, मगर किसी क़दर ख़ैरात वग़ैरे और दूसरे शुभ करम जो कोई बतावे वास्ते अपने आइंदा की जिंदगी के आराम और फ़ायदे के करते रहते हैं ॥

१२०—जिस क़दर डर ऊपर लिखे गये हैं वे सब

संसारी हैं सिवाय एक डर सच्चे गुरू और सच्चे मालिक के जो निर्मल परमार्थी है। पर चाहे किसी क़िसम का डर होवे, वह जीव के चाल चलन और ब्योहार वग़ैरे के दुरुस्त करने में मदद देता है। लेकिन निर्मल परमार्थी डर का फ़ायदा बहुत भारी है, यानो उस्से पूरी सफ़ाई मन और इंद्रियों वग़ैरे की हासिल होवेगी, और एक दिन सच्चे मालिक के धाम में पहुंचावेगा। ऐसे डर वाले का हर हाल में ऐतबार हो सक्ता है, पर दूसरी किसम के डरवालों का पूरा ऐतबार नहीं हो सक्ता, क्योंकि जब कोई कामना उनके मन में ज़बर उठेगी, या किसी तरह से अपने काम को ग़ैरों की नज़र से बचा सकेंगे, तब डर के बिसर जाने का ख़ौफ़ रहेगा॥

१२१—जिसके मन में सच्चे गुरू और सच्चे मालिक का डर है, वही बड़ भागी है, और वही मन और इच्छा की आफ़तों से हर हाल में बचेगा॥

१२२—जिसके मन में हाकिम और बिरादरी और अपने नुक़्सान और मौत वग़ैरे का डर किसी क़दर रहेगा, उसका भी चाल चलन और ब्योहार दुनिया में थोड़ा बहुत दुरुस्त रहेगा॥

१२३—जिसके मन में ख़ानदानी इष्ट और परलोक

और मौत वग़ैरे का कुछ डर रहेगा, उससे भी थोड़े बहुत शुभ करम और ख़ैरात वग़ैरा बन पड़ेंगे, और उसके एवज़ में थोड़ा बहुत सुख पावेगा ॥

१२४—लेकिन जिनके मन में यह सब डर आरज़ी तौर पर कभी आ जाते हैं और अक्सर बिसरे रहते हैं उनके क़ौल और फ़ेल यानी कथनी और करनी का ऐतबार नहीं हो सक्ता। वे अपने मतलब के पूरा करने के वास्ते जब जैसा मौक़ा होगा, बग़ैर सोच और बिचार के कार्रवाई करने को तइयार हो जावेंगे, और जब कोई डर ज़बर नहीं होगा, तब बिल्कुल् जंगली और वहशी आद्मियों के मुवाफ़िक़, बग़ैर द्या और रह्म के कार्रवाई करने को मुस्तैद् हो जावेंगे ॥

१२५—खुलासा यह है कि बग़ैर डर के शुरू में–बल्कि बहुत दूर तक यह मन सीधा और दुरुस्ती और इंसाफ़ के साथ नहीं चल् सक्ता है, और न बन्दोबस्त दुनिया का दुरुस्ती के साथ जारी रह सक्ता है, और न परमार्थ की कार्रवाई बन सक्ती है। इस वास्ते हर एक शख़्स को लाज़िम और मुनासिब है, कि अव्वल नम्बर मालिक का ख़ौफ़ मन में रक्खे, और जो यह डर क़ायम न होवे, तो जितने डर कि ऊपर लिखे हैं, उनमें से कोई न कोई ज़बर करके माने, तो

उसका किसी क़दर बचाव और सम्हाल मुमकिन होगी, नहीं तो उसका बर्तावा दुनिया में पशुओं यानी जानवर और वहशी और जंगली आदमियों के मुवाफ़िक़ रहेगा, और परमार्थ का भाग उसको मुतलक़ नहीं मिलेगा ॥

१२६–और छोटे डरों का जो ऊपर ज़िक्र हुआ, वे कोई २ अवस्था में पैदा होते हैं, और जब वह अवस्था या हालत ख़तम हो गई, तब जाते रहते हैं ॥

१२७–हाकिम के डर का फ़ायदा यह है, कि जो बुरे काम ख़िलक़त के दुखदाई हैं, और जिनके वास्ते क़ानून में सज़ा तजवीज़ की गई हैं, उनके करने से वे लोग जिनके मन में सच्चा डर आया है बच जाते हैं, और ख़िलक़त को रिफ़ाहियत और आराम होता है ॥

१२८—बिरादरी और रिश्तेदारों के डर का फ़ायदा यह है, कि जो बातें ख़िलाफ़ रसम और मरजाद और क़ानून वग़ैरे के हैं, उन में भी बर्ताव न करें, और ब्यौहार वग़ैरे में फ़रेब और दग़ाबाज़ी को काम में न लावें ॥

१२९–तीसरे डर नुक़्सान वग़ैरे का फ़ायदा यह है, कि आदमी बेजा और नाक़िस कार्रवाई, और दूसरे की हक़तलफ़ी करने और इक़रार वग़ैरा पूरा न करने से बच जाता है ॥